युग निर्माण योजना

मई 2024

₹ 13 – एक प्रति | ₹ 150 – वार्षिक | वर्ष – 60 | अंक – 11

गायत्री तपोभूमि,मथुरा

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्
उस प्राणस्वरूप, दुःखनाशक, सुखस्वरूप, श्रेष्ठ, तेजस्वी, पापनाशक, देवस्वरूप परमात्मा को हम अपनी अंतरात्मा में धारण करें । वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करे ।

युग निर्माण योजना

नैतिक एवं सांस्कृतिक पुनरुत्थान का मासिक पत्र

संस्थापक / संरक्षक
वेदमूर्ति तपोनिष्ठ युगद्रष्टा
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य
एवं
माता भगवती देवी शर्मा
संपादक
ईश्वर शरण पाण्डेय
सहसंपादक
सूर्यमणि तिवारी
दीनदयाल अमृते
कार्यालय
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा
पि० को० 281003
दूरभाष नंबर
(0565) 2530115, 2530128, 2530399,
मो० 09927086287, 09927086289
(इन पर एस.एम.एस. न करें)

समय : प्रातः 9 से सायं 5 बजे
ई-मेल :
yugnirman@yugnirmanyojna.org

मई—2024
प्रकाशन तिथि : 17.04.2024
वर्ष : 60 अंक : 11
वार्षिक शुल्क : 150 रु०
आजीवन : 3000 रु०
(बीसवर्षीय)
वार्षिक विदेश : 2200 रु०

आवेश एक मानसिक रोग

आवेश प्रधान व्यक्ति का हर काम उतावली से भरा होता है। वह अपने कामों में आवश्यक धैर्य तथा संतुलन नहीं रख पाता। समय से पूर्व फल की आकांक्षा करने पर जब वह पूरी नहीं होती, तब उत्तेजित होकर खीझ उठता है। तब वह या तो अपने कर्त्तव्यकर्म से चिढ़ने लगता है अथवा समाज को दोषी मानकर द्वेष करने लगता है और बदले में अपने विरोधी पैदा कर लेता है।

आवेश प्रधान व्यक्ति की बेल कभी सिरे नहीं चढ़ती। उसकी अस्त-व्यस्त गति उसके पैरों को उलझाती रहती है। उसके काम बिगड़ते अथवा कुरूप होते रहते हैं, जिससे उसे एक दिन स्वयं अपने से अरुचि हो सकती है और तब किसी ऊँचे लक्ष्य को पाना तो क्या सामान्य जीवन भी खिन्नता से भर जाता है।

आवेश निश्चय ही एक मानसिक रोग है; जिसका उपचार धैर्य, संतुलन तथा स्थिरता ही है। यदि आप में आवेश की दुर्बलता है तो पहले अभ्यास एवं प्रयत्नपूर्वक उसे धैर्य, संतुलन तथा स्वयं से स्थानापन्न कर लीजिए, तब शांतिपूर्वक अपना लक्ष्य निर्धारित करिए। दिशा का निर्णय करिए और सोचे हुए सुनियोजित कार्यक्रम के अनुसार गंतव्य की ओर कदम बढ़ाइए।

असहनशील व्यक्ति मार्ग की उन बाधाओं तथा विरोधों से उस प्रकार नहीं निपट सकता, जिस प्रकार प्रगति के महत्त्वाकांक्षी के लिए संभव है। विरोधों का विरोध करना होता है। अवरोधों को धकेलना होता है।

(अखण्ड ज्योति, अप्रैल 1967 से)

अनुक्रमणिका

- आवरण पृष्ठ—1 — 1
- आवरण पृष्ठ—2 — 2
- आवेश एक मानसिक रोग — 3
- काम करें, भावना और लगन से — 5
- **नृसिंह जयंती पर विशेष**
  भगवान नृसिंह का अवतरण — 7
- **बुद्ध पूर्णिमा पर विशेष**
  भगवान बुद्ध की प्रेरणाएँ — 8
- लू का घरेलू प्राकृतिक उपचार — 10
- अपना व्यवहार सुधारिए — 11
- एकाकी परिवार में आत्मीयता का अकाल — 13
- धर्मपरायण युधिष्ठिर की साधना — 15
- पहला सुख—निरोगी काया — 17
- **आत्मीय अनुरोध**
  सतयुगी भाव में गंगा स्नान कीजिए — 19
- **ज्ञातव्य** — 21
- बुद्धि को संपदा बनाइए — 23
- महामानव बनते हैं, स्वाध्याय से — 26
- जैसे विचार होंगे, वैसा जीवन बनेगा — 29
- पुदीना के स्वास्थ्यकारक प्रयोग — 32
- **युगपुरुष की लेखनी से**
  पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय अमृत कलश — 35
- गायत्री तपोभूमि के बैंक खातों का विवरण — 36
- प्राकृतिक चिकित्सा के शरीर-शोधन शिविर — 37
- देवसंस्कृति के चार आधार (कविता) — 38
- आवरण पृष्ठ—3 — 39
- आवरण पृष्ठ—4 — 40

मई-जून, 2024 के पर्व-त्योहार

शनिवार	04 मई	वरूथिनी एकादशी
शुक्रवार	10 मई	परशुराम जयंती/ अक्षय तृतीया
सोमवार	13 मई	सूर्य षष्ठी
मंगलवार	14 मई	गंगोत्पत्ति
शुक्रवार	17 मई	जानकी जयंती
रविवार	19 मई	मोहिनी एकादशी
मंगलवार	21 मई	नृसिंह जयंती
गुरुवार	23 मई	बुद्ध पूर्णिमा
रविवार	02 जून	अपरा एकादशी 'स्मा.'
गुरुवार	06 जून	वट सावित्री व्रत
बुधवार	12 जून	सूर्य षष्ठी
रविवार	16 जून	गायत्री जयंती/ परमपूज्य गुरुदेव महाप्रयाण दिवस
सोमवार	17 जून	निर्जला एकादशी/ ईदुज्जुहा
शनिवार	22 जून	कबीर जयंती

LIBRARY 21-5-24

काम करें, भावना और लगन से

मनुष्य की आंतरिक अभिव्यक्ति, उसके काम करने की लगन और भावना से ही परखी जा सकती है। कर्म का सुख वस्तुत: उसकी लगन, भावना और निष्ठा में ही है। इस तरह संपन्न किए गए कर्म प्रफुल्लता दे जाते हैं, किंतु अनुत्साहपूर्वक काम करने से निराशा, क्षोभ और असफलता ही हाथ लगती है।

काम करने की एक भावना होनी चाहिए—उत्कृष्ट और विशाल भावना। आपका आत्मविश्वास यह कहता हो कि हम इस कार्य को करके ही छोड़ेंगे; इसमें आत्महित है और पुरुषार्थ है, तो आप सच मानिए; उस कार्य में आपको असीम आनंद आएगा।

मनुष्य का जीवन, एक आदर्श कर्म-विद्यालय है। इसमें नैष्ठिक स्नातक वे समझे जाते हैं, जो कर्म को जीवन का ध्येय मानकर उसे कुशलतापूर्वक निभाते हैं। विद्यार्थी अच्छे नंबरों से उत्तीर्ण होने का लाभ तब पाता है, जब वह लगनपूर्वक, भावनापूर्वक अध्ययन-कार्यों में लगा रहता है। जिस तरह स्वाध्याय की चमक यह व्यक्त करती है कि विद्यार्थी का भविष्य उज्ज्वल है; उसी प्रकार कर्म की उत्कृष्ट भावना यह बताती है कि इस मनुष्य का हृदय उत्कृष्ट और विशाल है। इन गुणों के कारण ही उसका व्यक्तित्व निखरता, समुन्नत होता और श्रेय प्राप्त करता है।

जो शक्ति परिस्थितियों को अनुकूल बनाती है, वह है—काम करने की लगन और भावना। मानवीय गुणों में एक गुण यह भी है कि वह भिन्न-भिन्न अवस्थाओं के साथ भी आश्चर्यजनक ढंग से अपना मेल पैदा कर सकता है। मन की तन्मयता में वह शक्ति है, जो एक ही लक्ष्य के हजार रास्ते खोलकर रख देती है। इनमें से कोई भी मनुष्य अपनी रुचि, शक्ति और सामर्थ्य के अनुरूप अपना चुनाव कर सकता है।

यह दुनिया वैसे ही बड़ी नीरस है। यहाँ का रहा-सहा आनंद भी व्यवसाय की अरुचि में चला जाता है। बिना उद्देश्य और भावना के मशीन की तरह काम करने से इस जीवन के सारे आनंद नष्ट हो जाते हैं। अत: आवश्यकता यह है कि मन और आत्मपरिष्कार के लिए यह जीवन कलापूर्ण ढंग से जीने का अभ्यास डाला जाए। काम चाहे जैसा हो, अपनी लगन के द्वारा उसमें सरसता उत्पन्न करते हैं, बस, यही सर्वोत्तम जीवन जीने का गुरुमंत्र है। इसे अपने जीवन में विकसित कर सकें, तो बस इस जीवन में सफलता-ही-सफलता और आनंद-ही-आनंद है। जिसने काम करने की ललित कला सीख ली, उसे सुख प्राप्त करने के लिए अन्यत्र भटकने की क्या आवश्यकता है ? कर्म ही मनुष्य जीवन का सच्चा सुख है।

लौकिक दृष्टि से कर्म के बाह्यस्वरूप को ही महत्त्व दिया जाता है; क्योंकि व्यक्ति की भावना का प्रमाण उसी से तो मिलता है। भीतर की बात कर्त्ता या उसका भगवान ही समझता है। लोगों को तो किसी की मनोवृत्ति का परिचय उसकी बाह्य गतिविधियों से ही मिलता है, इसलिए मोटी कसौटी कर्म का स्वरूप ही मानी गई है और उसी के आधार

पर कर्म के भले-बुरे होने का निष्कर्ष निकालते हैं। काम चलाने की दृष्टि से यह व्यवस्था ठीक भी है, पर वास्तविकता को जानना हो, तो कर्त्ता की भावना को ही महत्त्व देना पड़ेगा।

गेरूआ वस्त्रधारी, कमंडलु-चिमटा लिए जटाजूट, भस्म, त्रिपुंड से सुसज्जित व्यक्ति को आमतौर से संत-महात्मा माना जाता है और लोग उसका आदर-सम्मान भी करते हैं। वेशभूषा को देखकर उसके त्यागी, भगवद्भक्त और परमार्थप्रिय होने की मान्यता बनती है, पर ऐसा भी हो सकता है कि किसी चोर, डाकू ने अपनी वास्तविकता छिपाए रखने और आसानी से अपना दुष्कर्म करते रह सकने की दृष्टि से यह आवरण बनाया हो। इस प्रकार प्रवंचना से लोग धोखा खा सकते हैं, पर कर्त्ता के लिए तो वह दोहरा पाप ही हो जाएगा। चोरी के साथ-साथ धोखेबाजी का दोहरा पुट लग जाने से साधारण चोरी की अपेक्षा उस ठग चोर का अपराध दूना हो जाएगा। उसका दूना पतन होगा।

सामूहिक आयोजनों और संस्थाओं की सेवा-व्यवस्था करने वाले जब सेवा की ओट में शिकार करते हैं, तो उनका पाप अधिक प्रबल ही माना जाता है। बाहर के लोग जिन्हें वास्तविकता का ज्ञान नहीं है; वे सत्कार्यों में लगे हुए लोगों की प्रशंसा ही करेंगे, आदर ही देंगे, पर कर्त्ता को उसका परिणाम उस दृष्टिकोण के अनुरूप ही मिलेगा, जिससे प्रेरित होकर उसने वह कार्य किया है।

इसी प्रकार बाहर से बुरे दीखने वाले कार्य भी ऐसे हो सकते हैं, जो निंदनीय और घृणित दिखाई दें, पर सदुद्देश्य से प्रेरित किए जाने के कारण वस्तुतः वे शुभ कर्म ही माने जाते हैं और उनसे आत्मा का पतन नहीं, उत्थान होता है। डॉक्टर के ऑपरेशन करते समय रोगी की चिल्लाहट और वेदना को देखते हुए यह अनुमान होता है कि कोई निर्दयी किसी असहाय पर जुल्म ढा रहा है। समीप जाकर देखने से इस बात की और भी अधिक पुष्टि हो जाती है। देखने वाले अनजान लोग जिन्हें डॉक्टर के सदुद्देश्य और ऑपरेशन के बाद एक बड़े रोग से मुक्ति का विश्वास है, वे विचलित नहीं होते। उन्हें उस खून-खच्चर, तड़पन, चिल्लाहट के बीच भी करुणा और सद्भावना का दर्शन होता और वह डॉक्टर भी अपनी आत्मा के सामने सच्चा होने के कारण इतनी चीर-फाड़ करने के बाद भी पुण्यात्मा ही ठहरता है। कर्म का बाह्य स्वरूप नहीं, कर्त्ता की भावना ही तो प्रधान मानी जाती है।

तुम पर यदि विपत्तियाँ आती हैं, तुम को हानि उठानी पड़ती है, तो उससे निराश मत हो, दूसरे के पापयुक्त व्यवहार की निंदा करना और उन व्यक्तियों का विरोध करना बंद कर दो। दूसरों को हानि पहुँचाने वाले एवं दुष्टतापूर्ण विचारों को त्याग दो; क्योंकि इसी से तुम्हारे मन की शांति, शुद्ध धर्म और सच्चे सुधार की प्राप्ति हो सकेगी।

इस संसार में भावना ही प्रधान है। कर्म का भला-बुरा रूप उसी के आधार पर बंधनकारक और मुक्तिदायक बनता है। सद्भावना से प्रेरित कर्म सदा शुभ और श्रेष्ठ ही होते हैं, पर कदाचित् वे अनुपयुक्त भी बन पड़ें, तो भी लोकदृष्टि से हेय ठहरते हुए वे आत्मिक दृष्टि से उत्कृष्ट ही सिद्ध होंगे। आंतरिक उत्कृष्टता, सदाशयता, उच्च भावना और कर्त्तव्य-बुद्धि रखकर हम साधारण जीवन व्यतीत करते हुए भी महान बनते हैं तथा इसी से हमारी लक्ष्यपूर्ति सरल बनती है। □

नृसिंह जयंती पर विशेष

भगवान नृसिंह का अवतरण

उन्मत्त हिरण्यकशिपु की क्रोधाग्नि में प्रह्लाद के इन वचनों ने घी का काम किया और वह गरजता हुआ प्रह्लाद की ओर दौड़ा; मेरी सीख को न समझकर मुझे ही उपदेश देने वाले धृष्ट! तू ऐसे नहीं मानेगा। तुझ जैसे कुल-कलंकी का तो कुल में न होना ही अच्छा। और हिरण्यकशिपु प्रह्लाद को मारने के लिए झपटा। आवेश में संतुलन न रह सका और जो घूँसा प्रह्लाद पर वार करने के लिए उठा था, वह उस खंभे पर पड़ा, जिसके सहारे प्रह्लाद खड़ा था। खंभा टूट गया और उसी खंभे से प्रकट हुए नृसिंह भगवान (विष्णु भगवान के अवतार) आधा नर और आधा सिंह का रूप धारण किए; उन्होंने हिरण्यकशिपु को पकड़कर अपने तीक्ष्ण नखों से उसका पेट फाड़ डाला।

देवगण सोचने लगे कि यदि प्रभु का क्रोध शांत नहीं हुआ तो अनर्थ हो जाएगा। उन्होंने भगवती लक्ष्मी को भेजा, किंतु लक्ष्मी जी भी यह विकराल रूप देखकर भयभीत हो लौट आईं। अंत में ब्रह्माजी ने प्रह्लाद से कहा—"बेटा! तुम्हीं समीप जाकर उनका क्रोध शांत करो।" प्रह्लाद सहज भाव से प्रभु के सम्मुख गए और दंडवत् प्रणिपात करके उनके सामने लेट गए। भगवान नृसिंह ने अपने भक्त को सामने प्रणिपात देखकर कहा—"वत्स! मैं तुम्हारी भक्ति से प्रसन्न हूँ। तुम्हारी जो इच्छा हो वही वरदान माँग लो।" "प्रभु! मेरी क्या इच्छा हो सकती है?" प्रह्लाद ने कहा—"मुझे कुछ नहीं चाहिए।" "नहीं, प्रह्लाद कुछ भी माँग लो।" भगवान ने कहा—"मैं तुम्हारी भक्ति से बहुत प्रसन्न हूँ।" "भगवन्! मुझे कुछ नहीं चाहिए। जो सेवक कुछ पाने की आशा से अपने स्वामी की सेवा करता है, वह तो सेवक ही नहीं है। आप तो परम उदार हैं, मेरे स्वामी हैं और मैं आपका आश्रित अनुचर। यदि आप कुछ देना ही चाहते हैं तो यही वरदान दें कि मेरे मन में कभी कोई कामना ही उत्पन्न न हो।" "एवमस्तु!" "भगवान ने कहा और पुनः आग्रह किया, फिर भी प्रह्लाद कुछ तो अपने लिए माँग लो।"

प्रह्लाद ने सोचा, प्रभु जब बार-बार मुझसे माँगने के लिए कहते हैं तो अवश्य ही मेरे मन में कोई कामना है। बहुत सोच-विचार करने, मनःमंथन करने के बाद भी जब उन्हें लगा कि कुछ भी पाने की आकांक्षा नहीं है, तो वह बोले—"नाथ! मेरे पिता ने आपकी बहुत निंदा की है और आस्तिक जनों को बहुत कष्ट दिया है। वे घोर पातकी रहे हैं। मैं यही चाहता हूँ कि वे इन पापों से छूटकर पवित्र हो जाएँ।"

भगवान नृसिंह ने प्रह्लाद को गद्गद होकर कंठ से लगा लिया और उसकी सराहना करते हुए कहा—"धन्य हो बेटा तुम! जिसके मन में यह कामना है कि अपने को कष्ट देने वाले की भी दुर्गति न हो।" ❑

बुद्ध पूर्णिमा पर विशेष

भगवान बुद्ध की प्रेरणाएँ

जीवहत्या का कोई औचित्य नहीं है

भगवान बुद्ध गंभीर और सौम्य शांति की दीप्ति बिखेरते हुए शांत मुद्रा में आगे बढ़ रहे थे। उनके शिष्य पंक्तिबद्ध होकर उनके पीछे थे। लक्ष्य था राजगृह। वहाँ पहुँचकर, वहाँ के निवासियों को धर्म का उपदेश देना था।

तभी राह में भेड़ों का एक झुंड निकला। भेड़ों के पीछे उनका मालिक गड़रिया भेड़ के एक बच्चे को कंधे पर उठाए चल रहा था। तथागत ने सोचा कि शायद भेड़ के बच्चे को कोई पीड़ा है। उसकी पीड़ा को अनुभव करते हुए उन्होंने गड़रिये को रोककर उसे कंधे पर उठाने का कारण पूछा।

साधुवेश तेजस्वी संन्यासी को सामने देखकर गड़रिये का मन श्रद्धा से भर उठा। उसने बड़ी विनम्रता से कहा। इस मेमने के पैर में चोट है, जिसके कारण यह चल नहीं पा रहा है।

बुद्ध कातर हो उठे। उन्होंने मेमने के पीड़ित अंग का स्पर्श किया। तथागत का स्पर्श पाकर मूक पशु को जैसे राहत मिली हो। उसने आँखें मूँद लीं और भीगी पलकों से चुपचाप दो-चार आँसू बहा दिए। तभी गड़रिये ने पूछा—"भंते! आपको इस मेमने के पैर की चोट से इतनी व्यथा है, तो फिर थोड़ी देर बाद जब इन भेड़ों को एक साथ अग्नि में समर्पित किया जाएगा तो आपको कितनी पीड़ा होगी?" क्या कहा? शांत बुद्ध का मुखमंडल उग्र हो उठा। क्या ये भेड़ें बलि देने के लिए ले जाई जा रही हैं? कौन अभागा इन निरीह, निरपराध भेड़ों की बलि चढ़ाकर स्वर्गप्राप्ति का सौभाग्य लूटना चाहता है।

राजगृह का अधिपति अजातशत्रु। कहते हैं—"उसने अपने पिता का वध किया था। उसी पाप के प्रायश्चितस्वरूप वह यह यज्ञ रचा रहा है।"

भगवान बुद्ध जब राजभवन पहुँचे, तो पाया कि गड़रिये ने जो कहा था, वह अक्षरशः सत्य था। राजभवन के आँगन में स्त्री-पुरुषों की भीड़ लगी थी। यज्ञवेदी के चारों ओर बैठकर ब्राह्मण, पुरोहित मंत्रोच्चार कर रहे थे। अजातशत्रु पीतवस्त्र धारण कर यजमान के वेश में बैठे हुए थे। चारों ओर पशुओं की कतार लगी थी। उनके पास ही हाथ में नंगी तलवारें लिए वधिक खड़े थे। तथागत का आगमन होते ही सभा स्थल पर खलबली मच गई। अजातशत्रु भी भगवान की अभ्यर्थना के लिए आसन से उठे और बिना पूछे ही सारी बातें उन्हें बताने लगे। सारी बातें सुनने के बाद भगवान बुद्ध ने भेड़ों के सामने रखी घास से एक तिनका उठाया और उसे अजातशत्रु को थमाते हुए उसे तोड़ने को कहा। इस विचित्रता से अजातशत्रु ही नहीं, पूरी सभा असमंजस में थी। तथागत का आदेश मानकर अजातशत्रु ने तिनका तोड़ दिया और अगले आदेश की प्रतीक्षा करने लगे। भगवान बुद्ध ने कहा—"राजन्! अब इसे फिर से जोड़ दो।"

टूटे को जोड़ना कभी संभव है? राजा यही सोचते हुए चुप खड़े थे। तथागत ने इस दुविधा को भाँपते हुए अपनी बात कही—राजन्! जैसे इस टूटे को जोड़ना संभव नहीं

है, उसी प्रकार क्या एक हत्या के पाप को इन हजारों मूक पशुओं की हत्या से मिटाया जा सकता है, इनकी हत्या से क्या और पाप बढ़ नहीं जाएगा? अविवेकपूर्ण परंपराओं और अंधविश्वासों को अपनाकर पाप में कमी नहीं, वृद्धि ही होगी। यदि पाप के प्रायश्चित के लिए कुछ करना ही है तो ऐसा कार्य करो, जिससे दूसरों को शांति-सुख मिले। जैसे अग्नि को जल शांत करता है, वैसे ही पापों का शमन पुण्यों से किया जा सकता है।

अपशब्द ससम्मान लौटाए

भगवान बुद्ध भिक्षाटन करते हुए एक ऐसे ब्राह्मण के घर पहुँचे जो बुद्ध से प्रेम नहीं, घृणा करता था। बुद्ध से परिचित नहीं होने के कारण घर आए तपस्वी संन्यासी का पहले ब्राह्मण ने खूब सत्कार किया, लेकिन जैसे ही उसे पता चला कि वह बुद्ध हैं, तो उसने जी भरकर गालियाँ देना आरंभ कर दिया, खूब अपशब्द कहे और तुरंत निकल जाने को कहा।

बुद्ध निस्पृह भाव से बड़ी देर तक ब्राह्मण की बात सुनते रहे। जब उन सज्जन ने बोलना बंद किया, तो उन्होंने पूछा—"द्विजवर! आपके यहाँ कोई अतिथि आते होंगे तो आप उनका सुंदर भोजन और मिष्टान्न से स्वागत करते होंगे।"

"इसमे क्या शक है?" ब्राह्मण ने उत्तर दिया।

"और यदि किसी कारणवश अतिथि उन्हें स्वीकार न करें, तो आप उन्हें फेंक देते होंगे।" बुद्ध ने पूछा।

"फेंक क्यों देते हैं? हम स्वयं उन्हें ग्रहण कर लेते हैं।" बड़े विश्वास के साथ ब्राह्मण का उत्तर मिला।

"तो हम आपकी गालियों की यह भेंट भी स्वीकार नहीं करते। अपनी वस्तु आप ग्रहण कीजिए।" यह कहकर बुद्ध मुस्कारते हुए वहाँ से चल पड़े।

विनम्रता का पाठ

तथागत बोधिवृक्ष को साष्टांग दंडवत् कर रहे थे। उन्हें देख शिष्यों ने आश्चर्य से पूछा—"आप तो पूर्ण हैं। फिर इस तुच्छ वृक्ष को इतना सम्मान क्यों दे रहे हैं?" बुद्ध ने कहा—"आप सबको यह बोध कराने के लिए कि जो झुकता है, सो बड़ा होता है। ऐसा न हो कि आप लोग अहंकारी बनकर नमन की परंपरा भुला दो।"

गुण-दोष

हर मनुष्य में गुण-दोष होते हैं। इसलिए अच्छा वही है कि दूसरों के दोषों पर ध्यान न देकर उनके गुणों को परखा जाए और आपस में मिल-जुलकर एकदूसरे को सुधारने का प्रयास करते हुए प्रेमपूर्वक आगे बढ़ा जाए। ऐसा करने से दोष अपने आप कम होने लगेंगे। ❑

बुद्ध को तब आत्मबोध नहीं हुआ था। तपश्चर्या में संलग्न थे। कितनी ही कष्टसाध्य साधनाएँ कीं, पर लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हुई। मन अशांत और अस्थिर हो गया। सोचने लगे इस जीवन से तो अच्छा था महल में रहकर सुख-सुविधाओं से युक्त जीवन व्यतीत करता। वापस लौटने की सोच रहे थे। निकट ही एक कीड़ा एक वृक्ष पर चढ़ने का प्रयास कर रहा था। उसने दस बार चढ़ने का प्रयत्न किया, पर हर बार असफल रहा। ग्यारहवीं बार चढ़ने में सफल हो गया। ऐसा लगा बुद्ध को जैसे यह दृश्य उन्हीं की प्रेरणा के लिए रचा गया हो। बुद्ध का आत्मविश्वास जाग पड़ा और पूरी दृढ़ता के साथ आत्मसाधना के लिए आरूढ़ हो गए तथा अंतत: अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हुए। इस सामर्थ्य को सत्प्रवृत्ति संवर्द्धन में नियोजित करके विचार क्रांति कर सके।

लू का घरेलू प्राकृतिक उपचार

ग्रीष्म ऋतु में तापमान बढ़ने पर गरम हवाओं के कारण जानलेवा लू का खतरा रहता है। ज्वर सहित उलटी, पीले रंग का पेशाब होना मांसपेशियों में ऐंठन होना तथा आँखें लाल हो जाना। शरीर का तापमान 104° से 106° तक पहुँच जाता है। शरीर में जल की कमी 'डिहाइड्रेशन' हो जाने के कारण, दस्त (डायरिया) और हैजा (कालरा) होने से भी शरीर में जल की कमी हो जाती है। तेज धूप में नंगे सिर व नंगे पैर भूखे-प्यासे घूमने से लू लग जाती है।

बचाव

घर से बाहर धूप में जाना आवश्यक हो तो ठंढा पानी पीकर ही निकलना चाहिए। सिर और दोनों कानों को सूती कपड़े से लपेटकर धूप से बचाना जरूरी होता है।

एक प्याज जेब में रखकर निकलें। इससे शरीर की हानिकारक गरमी को प्याज अवशोषित कर लेता है, प्याज झुलस जाता है और हमारी रक्षा करता है।

उपचार

(1) लू के लक्षण जानते ही रोगी को विश्राम कराएँ। मस्तक पर ठंढे पानी से भीगी सूती कपड़े की पट्टी रखना और घर के स्वच्छ पानी की बरफ के टुकड़े मुख में रखकर चूसने को दें।

(2) प्याज का रस निकालकर हाथ-पैर के तलुओं पर लगाएँ।

(3) प्याज का रस 20-20 ग्राम एक-एक घंटे में पानी के साथ पिलाएँ।

(4) कच्चे आम (कैरी) को भूनकर गूदे को पानी में मसलकर, मिसरी मिलाकर शरबत बनाकर पिलाएँ।

(5) लू से बचाव के लिए सर्वप्रथम आहार में बदलाव होना चाहिए। सुपाच्य, सादा आहार तथा दही, छाछ, लस्सी आदि का प्रयोग नित्य करना चाहिए।

(6) सलाद में पुदीना, कच्चा प्याज, हरी पत्तेदार सब्जियों का उपयोग करें। प्याज लू से बचने का रामबाण उपाय है।

(7) ग्रीष्मकाल में पानी अधिक मात्रा में पीना न भूलें।

(8) ग्रीष्मकाल में चाय, काफी आदि गरम पेय तथा तले खाद्य कचौड़ी, समोसा, नमकीन तथा पूरी-पराँठों से परहेज रखना चाहिए।

(9) धूप के चश्मे तथा सिर पर तौलिया-गमछा का प्रयोग अवश्य करें।

(10) रोगी के पूरे शरीर को ठंढे पानी से, भीगी तौलिया से बार-बार पोंछते रहने से ठंढक मिलती है। बढ़े तापमान पर नियंत्रण होता है।

(11) बकरी के दूध से शरीर की मालिश भी फायदेमंद होती है।

(12) नीबू-पानी का शरबत तथा नारियल पानी या तरबूज का रस पीते रहना चाहिए।

(13) पानी हर घंटे पर पीना अनिवार्य समझें।

(14) 4-5 बादाम मींगी 8 घंटे पानी में भिगोकर, पीसकर मिसरी के साथ ठंढे दूध में पानी मिलाकर शरबत बनाकर पीना चाहिए।

(15) जौ के आटे में प्याज को पीसकर शरीर पर लेप करने से लू में शीघ्र लाभ मिलता है।

(16) एक कप पानी में पुदीन हरा की 10 बूँद मिलाकर 2-3 बार भुना जीरा पीसकर नमक के साथ दें। □

अपना व्यवहार सुधारिए

व्यवहार व्यक्तित्व का दर्पण है। हमारी सोच, हमारे विचार, विश्वास एवं भावों की झलक हमारे व्यवहार में प्रत्यक्ष दिखाई पड़ती है। व्यक्ति के व्यवहार में ही उसकी छवि दृष्टिगोचर होती है। हम जैसे होते हैं, वैसा ही व्यवहार करते हैं।

हमारे व्यक्तित्व की संरचना में कुछ दृश्य एवं कुछ अदृश्य तत्त्व होते हैं। जो दिखाई देता है, वह हमारा व्यवहार होता है, जो अदृश्य होता है, उसमें हमारी आस्था, विश्वास, विचार एवं भाव छिपे होते हैं। इन्हीं तत्त्वों के आधार पर हमारी छवि बनती है, जिसे सेल्फ इमेज (Self Image) कहते हैं। यदि हमारी छवि स्वच्छ एवं साफ है तो हमारी कार्यक्षमता बढ़ जाती है और हमारा व्यवहार शिष्ट एवं शालीन हो जाता है। सामान्यत: ऐसे व्यक्ति को सज्जन एवं सभ्य कहा जाता है। ऐसे श्रेष्ठ व्यक्तियों से जो भी मिलता है, बस, उनका हो जाता है। वे लोगों पर अपने व्यक्तित्व की ऐसी अमिट छाप छोड़ देते हैं, जिसे मिटा पाना संभव नहीं होता।

ऐसे सज्जन व्यक्तियों को कभी भी असफलता नहीं मिलती। यदि उन्हें असफलता का सामना करना भी पड़ता है, तो वे उसके कारणों का निराकरण करके अंतत: सफल हो ही जाते हैं। वास्तव में देखा जाए तो श्रेष्ठ व्यक्ति सफलता उसे मानते हैं; जिससे किसी सत्पात्र का भला हो, समाज एवं राष्ट्र के विकास में सहायता मिले तथा जिसके मिलने से आंतरिक प्रसन्नता एवं उल्लास का अनुभव हो। इनके लिए सफलता अहंकार का द्योतक नहीं है।

सामान्य व्यक्तियों की छवि बड़ी ही धुँधली एवं अस्पष्ट होती है, इसलिए इनके विचार एवं व्यवहार में कोई तारतम्य नहीं होता। सब कुछ बिखरा-बिखरा रहता है। ये लोग सदा पिछली असफलताओं से मिली निराशा से इस तरह चिपके रहते हैं कि अच्छा करने की सोच भी नहीं पाते। इनकी सोच इतनी नकारात्मक होती है कि न तो कोई बड़ी योजना बना पाते हैं और न किसी को सही सलाह दे पाते हैं। इन्हें काम बनने का नहीं, बिगड़ने का डर रहता है।

ऐसे व्यक्ति दु:ख सहन करने के आदी बन जाते हैं। वे सुख की कल्पना भी नहीं कर पाते। उनकी मानसिकता ऐसी बन जाती है कि ये किसी व्यक्ति को न तो सुखी एवं स्वस्थ देख पाते हैं और न स्वयं सुखी रह पाते हैं। जब भी ये किसी को असफल होते देखते हैं,

तो प्रसन्नता का अनुभव भी करते हैं। दूसरे की सफलता से उन्हें ईर्ष्या का अनुभव होता है। उसकी असफलता को देखकर उन्हें अपनी नाकामयाबी कम दिखाई पड़ती है, वरन एक प्रकार की शांति प्राप्त होती है। इस तरह ये हताशा-निराशा के आदी हो जाते हैं। इनके अंदर नकारात्मक विचारों का जमघट होता है। इन नकारात्मक विचारों के व्यक्ति के संपर्क में कोई अन्य व्यक्ति रहता है तो कभी-कभी उस पर भी उन विचारों का प्रभाव पड़ जाता है, जिससे वह भी संकट में आ जाता है।

इस संदर्भ में श्रीमाँ ने बड़े ही रोचक संस्मरण का वर्णन किया है। उनका भाई मिस्र में गवर्नर था। वह एक दिन छोटे चार्टर्ड प्लेन से मिस्र (इजिप्त) जा रहा था। प्लेन में इनके साथ एक और व्यक्ति था, जिसे अफ्रीका के रेगिस्तान के बीच स्थित किसी स्थान पर उतरना था। इस प्रकार प्लेन अपने गंतव्य की ओर उड़ान भर रहा था। सब कुछ ठीक-ठाक चल रहा था कि अचानक प्लेन डगमगाने लगा और लगा हवा में ही वह क्रैश हो जाएगा। पायलट को समझ नहीं आ रहा था कि यह क्या हो रहा है। उसके अनुसार किसी भी इंजन में कोई गड़वड़ी नहीं थी। किसी तरह अपनी सूझ-बूझ से पायलट ने उस स्थान पर प्लेन उतारा, जहाँ उस व्यक्ति को उतरना था। उस जगह वह व्यक्ति उतरा। कुछ समय विश्राम करने के बाद जब प्लेन ने दोबारा उड़ान भरी तो सब कुछ अपने आप ठीक हो गया। वे अपने गंतव्य तक सकुशल पहुँच गए।

यह बात जब श्रीमाँ को पता चली तो उन्होंने कहा—"वह व्यक्ति, जो तुम्हारे साथ था, नकारात्मक ऊर्जा से घिरा हुआ था। वह आसुरी शक्तियों का आकर्षण केंद्र था। आसुरी शक्तियाँ उसके माध्यम से अपना खेल खेल रही थीं। वह व्यक्ति कुछ देर तक और साथ चलता, तो सचमुच प्लेन क्रैश हो जाता। परंतु उसके उतरने के साथ ही वह दुर्घटना टल गई।"

श्रीमाँ कहतीं हैं कि ऐसे व्यक्ति के संपर्क में रहने से हमारे विचार भी परिवर्तित हो जाते हैं। इस तरह के लोगों से तथा नकारात्मक चिंतन एवं व्यवहार से जितनी दूरी बनाई जा सके, उतना ही श्रेयस्कर है।

व्यवहार में शिष्टता, शालीनता एवं विनम्रता होनी चाहिए तथा चिंतन को श्रेष्ठ बनाने के लिए स्वाध्याय की आदत डालनी चाहिए। नकारात्मक ऊर्जा को दूर करने के लिए जप-साधना करनी चाहिए। इस क्रम में गायत्री, नवार्ण एवं महामृत्युंजय मंत्र चमत्कारिक रूप से लाभकारी होते हैं। मंत्र के जप से हमारे अंदर की नकारात्मक ऊर्जा घटती है, जिससे हमारा व्यक्तित्व निखरने लगता है। हमारे भाव, विचार एवं व्यवहार सभी सधने एवं परिष्कृत होने लगते हैं। ❑

एकाकी परिवार में आत्मीयता का अकाल

यह सभी जानते हैं कि एकाकी परिवार में जीवन और भविष्य निश्चित नहीं है तथा सुख-सुविधाएँ भी उतनी नहीं प्राप्त हो सकेंगी, फिर भी क्यों युवक और युवतियाँ जितनी जल्दी हो सके, अपने माता-पिता, भाई-बहनों, सास-ननद तथा देवर-जेठों से अलग होने की इच्छा करने लगते हैं ? उत्तर स्पष्ट है कि जीवन के समस्त सुख और ऐश्वर्य अकेले भोगने तथा वृद्धों के प्रति अश्रद्धा एवं उपेक्षा का भाव होने के कारण ही इस इच्छा का जन्म होता है। परंतु परिवार से अलग होते ही जो परेशानियाँ और कठिनाइयाँ भोगनी पड़ती हैं, उनके फलस्वरूप जीवन भार लगने लगता है और पारिवारिक जीवन में कटुता के अंकुर फूटने लगते हैं।

एकाकी परिवार में महिलाओं की व्यस्तता बढ़ जाती है। सम्मिलित सब स्वजनों के साथ रहने पर घर की आंतरिक-व्यवस्था परिवार के सभी सदस्य मिल-जुलकर कर लेते हैं। जबकि केवल पति-पत्नी के साथ रहने पर सारी व्यवस्था का दायित्व अकेली पत्नी पर ही आ जाता है। व्यस्त जीवन में बच्चों पर समुचित ध्यान नहीं दिया जा सकता। वह प्रेम और ममत्व जो पिता व माता से मिलना चाहिए था; उसमें कमी आ जाती है। फलस्वरूप बालक का मानसिक विकास वैसा नहीं हो पाता—जो सम्मिलित परिवार में संभव था। वहाँ पिता का प्यार तो मिलता ही, दादा-दादी, चाचा-चाची, ताऊ-ताई का स्नेह और मार्गदर्शन भी उसके चतुर्मुखी विकास में सहायक सिद्ध होता। यही कारण है कि आज एकाकी परिवार के बच्चे प्राय: कुंठाग्रस्त देखे गए हैं।

महिलाओं और पुरुषों में वृद्धों के प्रति अवमानना और अविश्वास का भाव तो इस कदर बढ़ रहा है कि वे अपने बच्चों के लिए नौकरों और बाहर के व्यक्तियों पर विश्वास कर लेंगे, परंतु घर के वृद्ध स्त्री-पुरुषों पर नहीं। यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि नौकर या बाहर का व्यक्ति पारिवारिक या किसी स्वार्थवश बच्चों की देख-रेख और सार-सँभाल भले ही कर दे, परंतु उसके साथ आत्मीयता और प्यार की जो खुराक बालकों को मिलनी चाहिए उससे उन्हें वंचित ही रह जाना पड़ता है। आज के समय में दूसरों के बच्चों को शायद ही कोई भावभरे हृदय से दुलारता हो। जब व्यक्ति को अपने सहोदर भाइयों की संतानें भी फूटी आँख नहीं सुहाती तो औरों के बच्चों को वह क्या प्यार दे सकेगा। देख-रेख और अन्य बातों का ध्यान जितनी कुशलता से, आत्मीयता से घर

की अनुभवी वृद्ध महिलाएँ कर सकती हैं, उतनी आत्मीयता अन्यत्र कहीं मिल पाना असंभव है। यह विज्ञान सिद्ध तथ्य है कि ममत्व और प्रेम की छाया में पला-पनपा बालक चरित्र, क्रियाशीलता, परिश्रम और देश-प्रेम की भावनाओं से ओत-प्रोत होता है।

विघटन के कारण

दंपती अक्सर संकीर्ण भावना के शिकार होकर एकाकी परिवार बसाते हैं। परिवार में छोटा भाई ज्यादा कमाता हो और बड़ा कम तो छोटे भाई और उसकी पत्नी में यह भाव उठता है कि भैया तो हमसे बहुत कम कमाते हैं, फिर भी वे हमारे बराबर सुख-सुविधाओं का लाभ उठाते हैं। हमारी कमाई पर हमारा ही अधिकार है। उसमें किसी भी प्रकार दूसरे को लाभ नहीं उठाना चाहिए। यह संकीर्ण और ओछा विचार दिनोंदिन स्थायी होता चलता है। अंततः परिवार में विघटन पैदा हो जाता है। लेकिन जिस उद्देश्य से पति-पत्नी अलग हुए थे, वे उद्देश्य कदाचित् ही पूरे होते हैं। अलग मकान लेने पर मकान का किराया, ईंधन, तेल, बिजली आदि अन्य दूसरे खरच इतने अधिक अतिरिक्त पड़ते हैं कि पहले जितनी सुविधाएँ भी उपलब्ध नहीं हो पातीं। इस विचार के स्थान पर सोचा जाता, पति-पत्नी एकदूसरे को इस प्रकार समझाते कि हमारी कमाई का लाभ उठा रहा है तो उसमें अनुचित क्या है ? आखिर वह तो अपना ही है तो कितना अच्छा होता। आगे बढ़ने वाली आवश्यकताओं और व्यय की कल्पना कर स्वयं को लाभ में मानकर संतुष्ट रहा जा सकता था।

परिवार, समाज और राष्ट्र की इकाई है। यदि इस संस्था में ही आत्मीयता और सहयोग नहीं बढ़ सका, तो समाज में सामूहिकता और सुराज की कल्पना दिवास्वप्न ही बनकर रह जाएगी। युवा दंपत्तियों को भी और प्रौढ़ पुरुष-महिलाओं को भी एकाकी परिवार बसाते समय इन तथ्यों की ओर ध्यान देना चाहिए। सोचना चाहिए कि जैसा व्यवहार हम आज अपने माता-पिता से कर रहे हैं, वैसा हमारी संतान हमसे करे तो अपने हृदय पर क्या बीतेगी ? यह कल्पना या मन बहलाव की बात नहीं, एक सच्चाई है;

विद्यार्थी का बाल्यकाल सबसे महत्त्व का समय है। बच्चों के साथ समझदार बच्चे बनकर माँ-बाप उन पर जितना असर डाल सकते हैं, जितनी शिक्षा दे सकते हैं, बूढ़े बनकर नहीं। बच्चों को आलोचकों की अपेक्षा प्रशंसकों की अधिक आवश्यकता है। जिंदगी की वह उम्र बचपन ही है, जिसमें इनसान को मुहब्बत की सबसे ज्यादा जरूरत होती है।

क्योंकि ऐसे अभिभावक अपनी संतान को सहयोग-सहकार के संस्कारों से संस्कारित करते हैं।

परिवार को टूटने से बचाया जा सके और सम्मिलित परिवार को सामयिक एवं वैयक्तिक परिस्थितियों के अनुसार किसी भी रूप से जीवित रखा जा सके, तभी आदर्श समाज की रचना संभव होगी। ☐

धर्मपरायण युधिष्ठिर की साधना

एकदूसरे के मुख से निकलती हुई यह बात अनेक कानों में समा गई। भले ही कहने-वालों के स्वर धीमे हों, पर सभी के मनों में आश्चर्य तीव्र हो उठा। "क्या करते हैं सम्राट? कहाँ जाते हैं?" यद्यपि युद्ध प्रारंभ होने के पूर्व ही उन्होंने इस तथ्य की स्पष्ट घोषणा कर दी थी कि शाम का समय उनकी व्यक्तिगत उपासना के लिए है। इस समय उन्हें कोई व्यवधान न पहुँचाए।

"लेकिन वेश बदलकर जाना?"—अर्जुन के स्वर के पीछे चिंता की झलक थी। प्रश्न उनकी सुरक्षा का है। भीम कुछ उद्विग्न थे। "इससे सहायक सेनाएँ विचलित हो सकती हैं।"—नकुल, सहदेव प्राय: एक साथ बोले। महायुद्ध का प्रवाह पिछले दस दिनों से धावमान था। ऐसे में इन सबका चिंतित होना स्वाभाविक था। इन भाइयों की भाँति अन्य प्रियजनों की भी यही मनोदशा थी। "सत्य को जानने का उपाय उद्वेगपूर्ण मानसिकता-चिंताकुल चित्त नहीं। एक ही समाधान है। शांत मन से शोधपूर्ण कोशिश।" पार्थ सारथी के शब्दों ने सभी के मनों में घुमड़ रहे प्रश्न का उत्तर साकार कर दिया।

दिन छिपते ही युधिष्ठिर जैसे ही अपने कक्ष से बाहर निकले। अन्य भाई भी उनके पीछे हो लिए। मद्धिम पड़ते जा रहे प्रकाश में इन्होंने देखा महाराज अपने हाथ में कुछ लिए उधर की ओर बढ़ रहे हैं, जिधर दिन में संग्राम हुआ था। यह देखकर सभी की उत्सुकता और बढ़ गई। वे अपने को छिपाए उनका सावधानी से पीछा कर रहे थे। युद्धस्थल आ गया तो सब एक ओर छिपकर खड़े हो गए। तारों के मंद प्रकाश में इन सबकी आँखें पूर्ण सतर्कता से देख रही थीं; आखिर अब ये करते क्या हैं? इनकी ओर से अनजान युधिष्ठिर उन मृतकों में घूम-घूमकर देखने लगे। कोई घायल तो नहीं है, कोई प्यासा तो नहीं है, कोई भूख से तड़प तो नहीं रहा, किसी को घायलावस्था में अपने स्नेही-स्वजनों की चिंता तो नहीं सता रही। वे घायलों को ढूँढ़ते, उनसे पूछते और उन्हें अन्न-जल खिलाते-पिलाते बड़ी देर तक वहाँ घूमते रहे। कौरव पक्ष का रहा हो या पांडव पक्ष का, बिना किसी भेदभाव के वह सबकी सेवा करते रहे। किसी को घर की चिंता होती, तो वे उसे दूर करने का आश्वासन देते। इस तरह उन्हें रात्रि के तीन पहर वहाँ बीत गए?

ये सभी उनके लौटने की प्रतीक्षा में खड़े थे। समय हो गया। युधिष्ठिर लौटने लगे, तो ये सभी प्रकट होकर सामने आ गए। अर्जुन ने पूछा—"आपको! यों अपने आप को छिपाकर यहाँ आने की क्या जरूरत पड़ी?"

युधिष्ठिर सामने खड़े अपने बंधुओं को संबोधित कर बोले—"तात! इनमें से अनेकों कौरव दल के हैं, वे हमसे द्वेष रखते हैं। यदि मैं प्रकट होकर उनके पास जाता तो वे अपने हृदय की बातें मुझसे न कह पाते और इस तरह मैं सेवा के सौभाग्य से वंचित रह जाता।"

भीम तनिक नाराज होकर कहने लगे—"शत्रु की सेवा करना क्या अधर्म नहीं है?" "बंधु! शत्रु मनुष्य नहीं, पाप और अधर्म हुआ करता है।"—युधिष्ठिर का स्वर अपेक्षाकृत कोमल था। "अधर्म के विरुद्ध तो हम लड़ ही रहे हैं, पर मनुष्य तो आखिर आत्मा है, आत्मा का आत्मा से क्या द्वेष?" भीम युधिष्ठिर की इस महान आदर्शवादिता के लिए नतमस्तक न हो पाए थे, तब तक नकुल बोल पड़े—"लेकिन महाराज! आपने तो सर्वत्र यह घोषित कर रखा है कि यह समय आपकी ईश्वरोपासना का है; इस तरह झूठ बोलने का पाप तो आपको लगेगा ही।"

"नहीं नकुल!" युधिष्ठिर बोले—"भगवान की उपासना, जप, तप और ध्यान से ही नहीं होती, कर्म भी उसका उत्कृष्ट माध्यम है। यह विराट जगत् उन्हीं का प्रकट रूप है। जो दीन-दुःखी जन हैं, उनकी सेवा करना, जो पिछड़े और दलित हैं, उन्हें आत्मकल्याण का मार्ग दिखाना भी भगवान का ही भजन है।" अब और कुछ पूछने को शेष नहीं रह गया था।

सहदेव ने आगे बढ़कर उन्हें प्रणित निवेदन करते हुए कहा—"लोग सत्य ही कहते हैं, जहाँ सच्ची धर्मनिष्ठा होती है, विजय भी वहीं होती है। हमारी जीत का कारण इसीलिए सैन्यशक्ति नहीं, आपकी धर्मपरायणता की शक्ति है।" ❑

पुणे के चाफेकर बंधु के बलिदान के उल्लेख के बिना भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम का इतिहास अपूर्ण कहा जाएगा। पुणे में सन् 1907 में फैले प्लेग में अँगरेज सरकार के प्रतिनिधि रैंड के दुर्व्यवहार के कारण इन बंधुओं ने अपना एक युवा संगठन बना लिया। दामोदर, बालकृष्ण एवं वासुदेव नामक इन तीनों भाइयों ने रैंड द्वारा भारतवासियों के अपमान को तिलक के भाषण सुनने के बाद बड़ी गंभीरता से लिया। 22 जून को दामोदर ने एक समारोह में उपस्थित रैंड तथा दो साथियों को गोली से मार दिया। वे पकड़े गए। मुकदमा चला। मात्र 27 वर्ष की उम्र में वे फाँसी पर चढ़ा दिए गए। दोनों छोटे भाइयों ने विश्वासघाती साथियों को उनके कुकर्म का फल दिया। इन दोनों को भी फाँसी की सजा हुई। सारे मध्य व दक्षिण भारत तथा महाराष्ट्र में तिलक का 'मराठा' व 'केसरी' आग उगल रहा था। सारे देश में यह समाचार फैल गया। क्रांति की आग ने लपटें पकड़ीं। देश की आजादी में तीनों भाइयों का बलिदान हमेशा याद किया जाएगा।

पहला सुख निरोगी काया

जिस प्रकार बिना विद्या पढ़े कोई विद्वान नहीं बन सकता, उसी प्रकार स्वास्थ्य की दिशा में जागरूक रहे बिना और उसकी सुरक्षा के लिए सचेष्ट रहे बिना कोई व्यक्ति न तो नीरोग रह सकता है और न दीर्घजीवी बन सकता है। इसलिए जिन्हें जीवन से प्यार है, जो मनुष्य जीवन का कुछ लाभ लेना चाहते हैं, उन्हें सबसे प्रथम एक ही काम करना चाहिए कि स्वास्थ्य के महत्त्व पर गंभीरतापूर्वक विचार करें, उसके अभाव में होने वाली हानियों तथा स्वस्थ शरीर की संभावनाओं पर देर तक सोचें। यदि यह महत्त्व ठीक तरह समझ में आ जाए तो हम आरोग्य को प्राप्त करने के लिए सच्चे मन से सचेष्ट होंगे और तब दुर्बल शरीर को सबल बनाना तथा रोगों से छुटकारा प्राप्त करना कुछ भी कठिन न रहेगा।

संसार-सागर की यात्रा के लिए हमारा शरीर एक नाव है। शरीर के ऊपर हमारा पार उतरना या डूब जाना, बहुत कुछ निर्भर करता है। जिस तरह छिद्रयुक्त जीर्ण-शीर्ण, कमजोर नाव से चंचल गतिशील संघर्षयुक्त जलधारा को पार करना कठिन है, उसी तरह रोगी, निर्बल, असमर्थ शरीर से जीवनयात्रा भली प्रकार पूरी करना संभव नहीं होता। विजय, सफलता, आनंद, उल्लासमय जीवन बहुत कुछ स्वस्थ एवं बलवान शरीर पर निर्भर करता है। शरीर मनुष्य के लिए एक ऐसी ईश्वरीय देन है, जिसके अभाव की पूर्ति संसार में अन्य कोई भी वस्तु नहीं कर सकती।

हृदय, बुद्धि जैसे महत्त्वपूर्ण उपकरण भी अपना अस्तित्व सतेज स्वस्थ शरीर में ही कायम रख सकते हैं। शरीर के अस्वस्थ होते हुए ही बुद्धि मंद हो जाती है, विवेक जाता रहता है। हृदय अपना आनंद संगीत बंद कर देता है। मनुष्य के लिए शेष रह जाती है, जीवन की भयानकता, कठोरता, अशांति, क्लेश और अपमान। वह जीवित होते हुए भी मृततुल्य हो जाता है।

हमारा शरीर उस शीशे के ग्लोब की तरह है, जिसके माध्यम से लालटेन की दीपशिखा अपनी ज्योति बाहर प्रकट करती है। गंदा, कालिख-धुंध से खराब शीशा रोशनी को भली प्रकार बाहर प्रकट नहीं होने देता। जीर्ण-शीर्ण कमजोर शरीर भी आत्मज्योति की प्रकाश किरणों को संसार में व्याप्त नहीं होने देता। स्वस्थ एवं तेजस्वी शरीर ही आत्मा के तेजस्वी प्रकाश को धारण करके जीवन को आभामय-ज्योतिर्मय बना सकता है।

शास्त्रकारों ने शरीर को ही सब धर्मों का साधन कहा है। स्वस्थ शरीर के द्वारा जीवन और जगत् के धर्म-कर्त्तव्यों का भार वहन किया जा सकता है। वस्तुत: बिना मजबूत शरीर के न हम किसी का ऋण चुका सकते हैं और न अपना कर्त्तव्य पूर्ण कर सकते हैं। दुर्बल शरीर से किसी की सेवा नहीं हो सकती है।

शरीर आत्मा का मंदिर है। बापू ने कहा है—"शरीर आत्मा के रहने की जगह होने से तीर्थ जैसा पवित्र है।" आवश्यकता इस बात

की है कि हम इसे तीर्थ की तरह ही स्वच्छ, सुंदर, विकारशून्य बनाने का प्रयत्न करें।

शरीर के माध्यम से ही जीवन और जगत् का सौंदर्य-आनंद लाभ लिया जा सकता है। शरीर में जब भरपूर उछल-कूद, मन में अपार उत्साह होता है, तो यह संसार क्रीड़ाभूमि-सा दिखता है। स्वर्ग लगने लगता है और जब शरीर असमर्थ, अयोग्य, बलहीन हो जाता है तो यह संसार नरकतुल्य जान पड़ता है। जीवन भारस्वरूप लगने लगता है, पाश्चात्य विद्वान बीचर ने कहा है—"शरीर वीणा है और आनंद संगीत। यह जरूरी है कि यंत्र दुरुस्त रहे।" आनंद का संगीत स्वस्थ शरीर में ही स्पंदित होने लगता है।

शरीर का रोगी, जीर्ण-शीर्ण, कमजोर होना अपने आप में एक बहुत बड़ा पाप है। जार्ज बर्नार्ड शॉ ने कहा है—"यदि कोई बीमार पड़ेगा तो मैं उसे जेल भेज दूँगा।" बीमारी सजा है प्रकृति के नियमों का उल्लंघन करने की। रोगी होना अपने आप में अपराधी होना है। मुख्यत: मनुष्य की अपनी भूलें, वे परिस्थितियाँ जिनमें वह रहता है और जिनके निर्माण में खासतौर से वह स्वयं ही उत्तरदायी है, मुख्य होती हैं। रोगी होकर जहाँ मनुष्य अपने लिए नरक का द्वार खोलता है, वहाँ समाज की उन्नति में भी बाधा पहुँचाता है; क्योंकि एक ओर तो वह व्यक्ति समाज के लिए जो कुछ करता है, वह रुक जाता है, दूसरे अन्य लोगों का समय, श्रम, धन रोगी के लिए लगने लगता है, परिवार के लोगों में चिंता फैलती है।

स्वस्थ बलवान शरीर फटे कपड़ों में भी सुंदर लगता है। रोगी और निस्तेज व्यक्ति सुंदर कपड़ों को भी भद्दा बना देता है। उसे कितना भी सजाओ वह आकर्षक और कुरूप ही लगेगा।

उत्तम स्वास्थ्य जीवन का सौंदर्य है, आनंद की खान है। स्वास्थ्य और बल की उपासना की प्रथम कक्षा मानव देह है। शरीर को स्वस्थ, बलवान, तरोताजा, स्फूर्तिवान, तेजस्वी बनाना आवश्यक है। यही वह आधार है, जिससे जीवन में अन्य स्रोत खुलने की संभावना हो सकती है। स्मरण रहे कि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन निवास करता है। बलवान शरीर ही आत्मा का तेज धारण करने में समर्थ होता है। कांतिवान, हँसमुख चेहरा, तेज, ओज ही दूसरों के लिए आकर्षण का प्रकृत केंद्र होता है। मनुष्य के शारीरिक स्वास्थ्य पर ही शक्ति-सामर्थ्य के अन्य स्रोत निर्भर करते हैं। इसलिए शरीर को सर्वप्रथम बलवान, स्वस्थ, तेजस्वी बनाने पर ध्यान देना चाहिए।

वैयक्तिक जीवन में शरीर के बाद नंबर आता है—हृदय और बुद्धि का। कवींद्र रवींद्र ने कहा है—"हे भगवन! यह शरीर तेरा मंदिर है। अत: इसे मैं हमेशा पवित्र रखूँगा, आपने मुझे यह हृदय दिया है, मैं इसे प्रेम से भर दूँगा; आपने मुझे यह बुद्धि दी है; मैं इस दीपक को हमेशा निर्मल और तेजस्वी बनाए रखूँगा।" शरीर के साथ-साथ हृदय व बुद्धि का भी अपने-अपने क्षेत्र में स्वस्थ, सतेज होना आवश्यक है।

अक्सर देखा जाता है कि कई व्यक्ति शरीर से स्वस्थ होते हैं, लेकिन उनका हृदय और बुद्धि अविकसित ही रह जाते हैं। बहुत-से पहलवान कहलाने वाले लोग बुद्धि के ठस और हृदय से प्रेम, आनंद, निर्मलताशून्य होते हैं। आज तो यह एक धारणा-सी बन गई है कि जो शरीर से तगड़ा होगा, बुद्धि से कमजोर रहेगा। जो बुद्धिमान होगा, उसका शरीर दुर्बल होगा, लेकिन वस्तुत: यह विश्वास गलत है। शरीर, मन, हृदय तीनों में से एक के भी निर्बल होने पर मनुष्य बलवान नहीं कहा जा सकता। □

सतयुगी भाव में गंगास्नान कीजिए

पतितपावनी भगवती माँ गंगा का जब इस धरा पर अवतरण हुआ था, स्वर्ग से जब वे भूलोक पर उतरने वाली थीं तब उन्होंने भगीरथ को इच्छापूर्ण वरदान देते हुए पूछा था कि मैं किस प्रकार भूलोक पर पहुँचूँ? स्वर्ग और पृथ्वी के बीच बहुत बड़ा अंतर है। स्वर्ग की ऊँचाई से नीचे की धरा पर जब गिरूँगी तो वह मेरा वेग सहन न कर पाएगी, फिर तुम जिस भूखंड की शांति के लिए मुझे ले जाना चाहते हो, उससे पूर्व सृष्टि का काफी बड़ा नुकसान हो चुका होगा और तुम्हारा उद्देश्य पूरा न हो सकेगा।

भगवती गंगा की बात सुनकर भगीरथ चिंता में पड़ गए। स्वर्ग की ऊँचाई से काफी नीचे स्थित पृथ्वी पर गंगा के गिरने से काफी बड़ा खतरा होना स्पष्ट दिख रहा था। माँ गंगा ने भगीरथ को सलाह दी कि वे भगवान शिव के पास जाकर सहायता की याचना करें। भगीरथ ने वैसा ही किया। शिवजी ने स्थिति की गंभीरता को समझा और निर्णय लिया कि वे गंगा को अपने शीश पर लेंगे, फिर कैलास पर उतारेंगे, तदुपरांत तपोभूमियों में होते हुए आगे बढ़ाएँगे। अंत में तो वह छोटी-बड़ी नदियों-नालों को अपने में मिलाते हुए आगे बढ़ती जाएँगी। इसी दैवी योजना के अनुसार गंगा को पृथ्वी पर अवतरित किया जा सका।

परमपूज्य गुरुदेव वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं० श्रीराम शर्मा आचार्य जी का धरा पर अवतरण ज्ञान की गंगा को जन-जन तक पहुँचाने के लिए हुआ था। यह काम आसान नहीं है। इस गूढ़ विषय को इतनी आसानी से जन-जन तक उपलब्ध कराने में कई बाधाएँ आनी स्वाभाविक हैं, पर परमपूज्य ने अपनी तपशक्ति से जिस दिव्य वातावरण का निर्माण किया है उससे सामान्य गायत्रीसाधक प्रेरणा प्राप्त कर रहे हैं और इसे गति देने में जुट गए हैं।

स्थान-स्थान पर अखण्ड ज्योति पाठकों के सम्मेलन हो रहे हैं, पुस्तक मेले लगाए जा रहे हैं और स्वाध्याय मंडल संचालित हो रहे हैं। परमपूज्य गुरुदेव ने एक बार कहा—"आप ज्ञानगंगा को पहले अपने मस्तिष्क में स्थान दीजिए, फिर वचन में और उसके बाद अपने कर्म में।"

हमें मिला है, देने के लिए

परमपूज्य गुरुदेव युगद्रष्टा थे और वे सतत प्रयत्न करते रहते थे कि उनसे जुड़े लोग भी सामान्य सोच-से ऊपर उठकर दृश्यमान क्षितिज के उस पार देखने और उससे जुड़ने का प्रयास करें। उन दिनों कुछ परिवारों में बच्चों को स्वार्थपरता की ओर जुड़ते रहने का प्रशिक्षण प्राप्त होता था। सामान्य व्यवहार में भी 'लेन-देन' कहकर लेने की बात को महत्त्व दिया जाता था। इसके विपरीत अँगरेजी भाषा का देन-लेन (Give and take) तुलनात्मक रूप में और अच्छा संदेश प्रस्तुत करता था। परमपूज्य ने अपने प्रवचनों, पुस्तकों में देने के महत्त्व को तो प्रतिपादित किया ही है, अपने व्यवहार में भी इसे सर्वोच्च स्थान दिया, उन्होंने अपनी बाल्यावस्था में पक्षियों को दाना खिलाना,

जरूरतमंदों को वस्त्रदान करने के आदर्श प्रस्तुत किए। मथुरा में गायत्री तपोभूमि के निर्माण हेतु जो भूमि उन्होंने क्रय की, उसका मूल्य उन्होंने अपनी निजी राशि से खरच किया था। इसकी रजिस्ट्री गीता जयंती 1952 के शुभ दिन हुई थी। जमीन खरीदने के कुछ दिनों बाद जब परमवंदनीया माताजी को पता चला कि पूज्य गुरुदेव तपोभूमि के निर्माण के बारे में कुछ भी नहीं कर रहे हैं, कोई बात तक नहीं कर रहे हैं और इस संबंध में कुछ भी बोलने से बच रहे हैं, तो उन्होंने स्वयं ही पूछ लिया। गुरुदेव ने जब कहा कि उनके पास अब कुछ भी नहीं बचा। यदि कुछ राशि पास में होती तो निश्चित ही निर्माण कार्य आरंभ हो गया होता तो माताजी ने उसी क्षण अपने सारे गहने उतारकर तथा बक्से से निकालकर पूज्यवर को समर्पित कर दिए थे।

जब हमारे मन में यह भाव जाग्रत हो जाता है कि ईश्वर देता है देने के लिए तो सारे अभाव और कष्ट मिट जाते हैं। यही ईश्वरीय व्यवस्था है, जिसका दिग्दर्शन हमारी गुरुसत्ता ने अपने आचरण और व्यवहार से प्रस्तुत किया है। आज हमारे युग निर्माण मिशन में अनेक बहन-भाई इस सतुयगी-भाव में जीते हुए आनंद प्राप्त कर रहे हैं। वे अपने जीवन में भौतिक लाभ के साथ-साथ आध्यात्मिक अनुदान को प्राप्त कर रहे हैं। उनके परिवारी जन तथा उनकी संतानें सुखी हैं।

गायत्री तपोभूमि में निर्माणाधीन गायत्री मंदिर

पाठकों ने पिछले माह (अप्रैल, 2024) की युग निर्माण योजना के पृष्ठ 20 पर पढ़ा होगा कि मारवल कांट्रैक्टर की सुस्ती से कार्य पिछड़ गया था। शुभ समाचार यह है कि जिस कार्य को उस ठेकेदार ने अधूरा छोड़ा था, उसे पूरा करने का काम शुरू कर दिया है। इसी पत्रिका के अंतिम टाइटिल पेज पर उस समय निर्माणाधीन मंदिर का चित्र छपा है। पाठक ध्यान से देखेंगे तो पाएँगे कि ऊपर के चित्र में दाईं ओर चार पैनलों में श्वेत जालीदार संगमरमर लगा दिख रहा है, जिसमें मात्र एक में पूर्ण रूप से संगमरमर लगा है और तीन पैनलों में ऊपर खाली दिख रहा है। इन पंक्तियों को लिखते समय तक तीन और पैनल शतप्रतिशत पूर्ण हो गए हैं और शेष पर कार्य चल रहा है। बाईं ओर तीन पैनलों के ऊपर वाले खाली भाग को भी शीघ्र संगमरमर से ढक दिया जाएगा। इस भाग में प्रथम तल पर नौ कुंडीय यज्ञशाला होगी।

इससे बाईं ओर चलेंगे तो ऊपर जाने की सीढ़ियाँ और लिफ्ट होंगी। इसी से सटे बाईं ओर भगवान महाकालेश्वर का मंदिर और गायत्री माता का मंदिर जिसके दोनों ओर परम वंदनीया माताजी तथा परमपूज्य गुरुदेव के मंदिर होंगे। और बाईं ओर चलने पर प्रखर-प्रज्ञा, सजल-श्रद्धा तथा सटे भवन में गायत्री माता की चौबीस शक्तियों के मंदिर होंगे। इसी चित्र में एक गोल गुंबद दिखाई दे रहा है, जो गायत्री माता के मंदिर के सामने वाले हॉल के ऊपर बना है। इसे भी सर्वोत्तम गुणवत्ता के सफेद संगमरमर से आच्छादित किया जाएगा। प्रखर-प्रज्ञा, सजल-श्रद्धा के ऊपर श्वेत संगमरमर के गुंबद के निर्माण की तैयारी चल रही है। प्रगति की मासिक रिपोर्ट भविष्य में देते रहेंगे। गुरुसत्ता ने हम सभी को अवसर दिया है इस अभूतपूर्व अभियान से जुड़ने का, ताकि इसका लोकार्पण सन् 2025 में सुनिश्चित हो सके। ❑

ज्ञातव्य

युगनिर्माता शिक्षक सम्मेलन (10 जून से 13 जून, 2024)

गायत्री तपोभूमि के पावन दिव्य एवं संस्कारित वातावरण में युगनिर्माता शिक्षक सम्मेलन आयोजित किया जा रहा है। मिशन से जुड़े शिक्षक बंधु तो इस सम्मेलन में अनिवार्य रूप से सम्मिलित हों ही, साथ में अन्य शिक्षक साथियों को भी लाने का प्रयास करें। 9 जून की सायंकाल तक अवश्य आ जाएँ। 13 जून दोपहर बाद विदाई हो जाएगी। **जो शिक्षक बंधु और बहनें आ रही हैं उनके नाम, पते, मोबाइल नंबर,ई-मेल अथवा डाक से अवश्य भेज दें।** अवकाशप्राप्त शिक्षकों को अवश्य लाएँ।

प्राणवान कार्यकर्त्ता शिविर—स्वर्णिम अवसर

दिनांक 15-16 जुलाई, 2024 एवं दिनांक 28-29 जुलाई, 2024

(कार्यक्रम प्रातःकाल से ही प्रारंभ होंगे, अतः एक दिन पूर्व पधारें)

सभी प्राणवान बहनों-भाइयों के लिए उपरोक्त तारीखों में इन विशिष्ट शिविरों का आयोजन गायत्री तपोभूमि, मथुरा में रखा गया है। प्राणवान परिजन अपनी क्षमताओं एवं विशिष्टताओं को पहचानें; ईश्वरप्रदत्त समय-संपदा का सदुपयोग करें तथा गुरुसत्ता के द्वारा निर्देशित जनोपयोगी कार्यों को हाथ में लेकर उल्लेखनीय योगदान प्रस्तुत करें; यही इन शिविरों का उद्देश्य है।

निवेदन है कि अधिकाधिक परिजन इस स्वर्णिम सुयोग का लाभ उठाएँ। साथ में कौन-कौन आ रहे हैं, उनके नाम, पते, फोन, व्यवसाय/पद एवं अन्य विवरण सहित जानकारी भेजकर अनुमति प्राप्त करें, ताकि आवास की उचित व्यवस्था हो सके।

मातृशक्ति सम्मेलन (दिनांक : 1, 2, 3, 4 सितंबर, 2024)

पूज्य गुरुदेव एवं वंदनीया माताजी ने नारी शक्ति के उत्कर्ष हेतु अथक पुरुषार्थ किया है। उनके इस कार्य को आगे बढ़ाने हेतु गायत्री तपोभूमि के पावन परिसर में आगामी 1, 2, 3, 4 सितंबर, 2024 की तिथियों में चार दिवसीय '**मातृशक्ति सम्मेलन**' आयोजित किया जा रहा है, जिसमें नारी उत्थान के प्रयत्नों-कार्यक्रमों पर विशेष परिचर्चा होगी एवं व्यावहारिक मार्गदर्शन दिया जाएगा। इस सम्मेलन में भागीदार बनने हेतु मातृशक्ति का आह्वान किया जा रहा है। इच्छुक बहनें अपना नाम, पता, फोन, व्यवसाय, पद तथा अन्य विवरण एवं साथ में आने वालों की संख्या आदि की जानकारी यहाँ भेजें और गायत्री तपोभूमि से संपर्क कर स्वीकृति प्राप्त कर लें, ताकि आवास की उचित व्यवस्था हो सके।

अनुष्ठान-साधना के लिए भावभरा आमंत्रण

गायत्री माता के प्रथम गायत्री मंदिर की प्राण-प्रतिष्ठा गुरुदेव की 24वर्षीय साधना की पूर्णाहुति के रूप में हुई। प्राण-प्रतिष्ठा से पहले पूज्यवर ने 24 दिन का गंगाजल का उपवास तपोभूमि में ही किया था। 1958 में प्रथम सहस्रकुंडीय यज्ञ यहीं संपन्न हुआ। 2400 तीर्थों का जल, रज, अखंड अग्नि एवं 2400 करोड़ हस्तलिखित गायत्री महामंत्र यहाँ स्थापित हैं। अत: यह पावनस्थली 2400 तीर्थों का प्रतिनिधित्व करती है। युग-परिवर्तन महापुरश्चरण के अंतर्गत संचालित 9 दिवसीय अनुष्ठान साधना में भाग लेना किसी के लिए भी सौभाग्य की बात है। सभी पाठक इन शिविरों में सादर आमंत्रित हैं। तिथियाँ निम्नानुसार हैं—

मई, 2024	जून, 2024	जुलाई, 2024
2 से 10	20 से 28	3 से 11
12 से 20		

तीसरी मंजिल पर आवास की व्यवस्था है। अतिवृद्ध, बीमार परिजन न आएँ; अन्यथा आवास की व्यवस्था सुनिश्चित नहीं हो सकेगी। अपना संपूर्ण विवरण—नाम, पता, व्यवसाय, फोन नं., जन्मदिनसहित आवेदन करें। **कृपया बिना स्वीकृति के न आएँ।**

माता सरस्वती शिविर, गायत्री तपोभूमि, मथुरा

[केवल 14 से अधिक वर्ष के छात्र-छात्राओं के लिए]

यह शिविर छात्र-छात्राओं के नैतिक, बौद्धिक स्तर को सुदृढ़ करने हेतु व्यक्तित्व विकास की दृष्टि से आयोजित किया गया है। इस शिविर में पढ़ने, याद करने की विधि, बुद्धि कुशाग्र करने, स्मरणशक्ति बढ़ाने, योग-आसन-प्राणायाम-ध्यान, जीवन जीने की कला, सत्प्रवृत्ति संवर्द्धन, दुष्प्रवृत्ति उन्मूलन का प्रशिक्षण होगा। गायत्री मंत्र-लेखन साधना होगी। अनुशासनप्रिय, अच्छी आदतों, अच्छे चरित्र के विद्यार्थियों के लिए यह स्वर्णिम अवसर है। निम्न पते पर अपना नाम, पूरा पता, आयु तथा शिक्षा, मोबाइल नंबर आदि विवरणसहित स्वीकृति हेतु आवेदन करें। कृपया बिना स्वीकृति के न आएँ। अपने साथ दैनिक उपयोग के वस्त्र, चादर, तेल, कंघा, मंजन-ब्रुश, साबुन आदि आवश्यक वस्तुएँ लेकर आएँ। शिविर के अंतिम दिन विदाई दोपहर 12 बजे होगी। नित्य 5.00 बजे जागरण से रात्रि 8.30 बजे तक व्यस्त निर्धारित दिनचर्या रहती है, जिसका पालन करना अनिवार्य होता है। अनुशासनहीन बच्चे न आएँ। लड़के-लड़कियाँ ग्रुप में अथवा अभिभावकों के साथ आ सकते हैं।

लड़कियों का शिविर
दिनांक 23 मई से 29 मई, 2024

लड़कों का शिविर
दिनांक 01 जून से 07 जून, 2024

समस्त पत्र व्यवहार, फोन, ई-मेल के लिए संपर्क सूत्र

पता—युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा-281003
फोन नं० : (0565) 2530115, 2530128, 2530399
मो.— 09927086287, 09927086289
ई-मेल. : yugnirman@yugnirmanyojna.org

बुद्धि को संपदा बनाइए

व्यक्तित्व संसार की सबसे खूबसूरत एवं शक्तिशाली चीज है। इसके अनेक आयाम हैं। बौद्धिक, व्यावहारिक, भावनात्मक एवं आत्मिक इसकी अंतर्निहित शक्तियाँ हैं। व्यक्तित्व के परिष्कार-परिमार्जन से ये प्रसुप्त शक्तियाँ जाग्रत होती हैं और तभी इन वेशकीमती संपदारूपी विभूतियों का उपयोग किया जा सकता है। हम इतने शक्तिशाली एवं बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी होने के बावजूद असहाय और असमर्थता का रोना रोते हैं तथा स्वयं को इस संसार का सबसे दुर्भाग्यशाली व्यक्ति मान बैठते हैं। हमने कभी अपने अंदर झाँकना नहीं सीखा, अपनी विभूतियों का ताकत के रूप में उपयोग करना नहीं जाना। इस घने कुहासे में आशा की उजली किरण है—व्यक्तित्वरूपी संसाधन का सही सदुपयोग।

व्यक्तित्व की चादर के अंदर अनेक अनमोल वस्तुएँ बिखरी पड़ी हैं। हमें इन्हें सहेजकर-परखकर इनका सही उपयोग करना आना चाहिए। व्यक्तित्व मुख्यत: त्रि-आयामी होता है—विचार, व्यवहार और भाव। संसार में जीने के लिए व्यवहार करना आना चाहिए। सांसारिक जीवन का सारा क्रिया-व्यापार व्यवहार के उपयोग पर टिका हुआ है। भौतिक सफलता के लिए यह द्वार का कार्य करता है। बौद्धिक-संपदा इस प्रक्रिया को अपनी मंजिल तक पहुँचाती है। व्यवहार के सुमेल का सुफल ही सफलता है। भावना इस सफलता को स्थिर बनाती है, सुखद बनाती है। सफलता का लाभ हमें तभी मिलता है, जब हमारे पास व्यक्तित्व के सभी आयामों को उपयोग करने की तकनीक पता हो।

यह विडंबना ही है कि हमारे पास बुद्धि होकर भी हम बुद्धिमान नहीं हैं। इसे बौद्धिक संपदा के रूप में उपयोग करने के लिए कुछ बातों का ध्यान रखना चाहिए। बुद्धि के विभिन्न आयामों को विकसित करके ही इसका सही उपयोग किया जा सकता है।

बुद्धि को संपदा के रूप में उपयोग करने के लिए सबसे पहला चरण है—धारा-प्रवाह सोच। हम कितना जल्दी सोचते हैं? हमारी सोच का प्रवाह टूटता तो नहीं? सोच में व्यतिक्रम तो नहीं आता है? ये सारी बातें हमारी बौद्धिक प्रतिभा की परिचायक हैं। यह गुण लेख लिखने में, बोलने में तथा किसी निर्दिष्ट विषय को सोचने में आवश्यक है। अत: सोच का पैनापन एवं प्रवाह को सदा श्रेष्ठ बनाए रखने का प्रयास करना चाहिए। हमारे इरादे दृढ़ हों, संकल्प मजबूत हों; पर इन्हें पाने की प्रक्रिया कई प्रकार की होनी चाहिए। यदि हम एक ही प्रक्रिया का चयन करते हैं तो इसका तात्पर्य है कि हम अड़ियल स्वभाव के हैं, जिद्दी हैं कि हम इसी तरीके से करेंगे; जबकि कार्य करने के अनेक तरीके होते हैं। एक में सफलता न मिले, तो दूसरे तरीके से उसे प्राप्त किया जा सकता है। चीजों

में गुणवत्ता लाने के लिए भी कार्य के तरीके में लचीलापन होना आवश्यक है। विचारों में दृढ़ता के साथ लचीलापन भी जरूरी है।

बुद्धि संपदा तभी बन सकती है, जब इसमें मौलिकता हो। मौलिकता का मतलब है—अपने किए कार्य पर अपना हस्ताक्षर होना चाहिए। हमारे कार्य की विशिष्ट पहचान होनी चाहिए। यह न तो किसी की नकल हो और न बेढब हो। हम जो भी सोचें, वह जुदा हो; जो भी बोलें, आकर्षक हो और जो भी करें, खास पहचान लिए हुए हो। हमारा अपना एक अनोखा अंदाज होना चाहिए, जो बस हमारा अपना हो और किसी का नहीं। यह गुण ही मौलिकता है। मौलिकता हम सबमें है। हर व्यक्ति में एक अनोखापन निहित है। बस, इसे पहचानने एवं विकसित करने की आवश्यकता है।

मौलिक सोच के साथ क्रांतिकारी विचार भी होना चाहिए। हमें अपनी क्षमता की पहचान करना आना चाहिए। हमारे पास वर्तमान एवं भविष्य की एक स्पष्ट योजना होनी चाहिए। हमें आज के साथ भविष्य के गर्भ में भी झाँकना आना चाहिए। विचार दूरदर्शी होना चाहिए। दूरदर्शिता का अर्थ है—दूर की सोचना। हमारे ऋषि क्रांतदर्शी होते थे। क्रांत अर्थात—पार देखने-वाला, सुदूर भविष्य को निहारने वाला। विचारक वह है, जिसके विचारों की सामयिकता सदियों बाद भी जीवंत हो। इस संदर्भ में स्वामी विवेकानंद के द्वारा उठाए गए सवाल सदियों बाद आज भी उतने ही ज्वलंत हैं। सवाल आज भी वही हैं, केवल उनका स्वरूप बदला है। श्री अरविंद, महर्षि रमण आदि ऋषि आज भी उतने ही सामयिक हैं; क्योंकि उनके विचारों की संवेदनशीलता बड़ी व्यापक है।

घटनाओं के उचित निर्णय से हम अवसर का लाभ ले सकते हैं। किसी विशेष अवसर पर संवेदित होने के लिए आवश्यक है कि हमें उस परिस्थिति का सही अंदाज हो और त्वरित निर्णय करने की क्षमता हो। जीवन में सुनहला मौका बारंबार नहीं आता। वह एक बार आता है। बुद्धिमान उस मौके का सही निर्णय करके उसका लाभ उठा लेता है, परंतु ढुलमुल व्यक्ति सोचता ही रह जाता है और अवसर हाथ से निकल जाता है। इसी कारण ईसामसीह कहते हैं कि कोई शुभ वस्तु आ रही है तो उसे बाएँ हाथ से पकड़ लो, क्या पता दाहिने हाथ तक पहुँचने से पहले ही कहीं गिर न जाए।

बुद्धिमान व्यक्ति अपनी बनाई राह पर चलते हैं। प्रतिभा जहाँ चलती है, वहीं पथ बन जाता है। वे एक नया परिणाम गढ़ते हैं। परंपराओं के स्थान पर वे विवेक को महत्त्व देते हुए एक नई परंपरा को विकसित करते हैं।

बुद्धि की क्रियाशीलता चीजों को स्पष्ट देखने में भी है। सामान्य व्यक्ति सरल एवं प्रांजल भाषा बताई गई बात को ही समझता है। अतः उसी रूप में समझा देना ही सफलता है। यह तभी संभव है, जब हम स्वयं अपने विषय एवं ज्ञान में पारदर्शी व स्पष्ट हों। हमें अपने विचारों में अत्यंत साफ व स्पष्ट होना चाहिए; ताकि हम अपनी बात को स्वयं औरों को समझा सकें।

बुद्धि की विशेषता है—तर्क करना। तर्क यदि तथ्यपरक न हो तो वह अपने ही बुने मकड़जाल में उलझ जाती है। यह स्थिति बड़ी विषम एवं ऊहापोह भरी होती है और ऐसे में द्वंद्व पनपता है। द्वंद्व मन शंकाशील एवं संदेहमय हो जाता है एवं जीवन तनावपूर्ण बन जाता है।

अत: मन को सकारात्मक सोच तथा बुद्धि को सही चीजों का सही चुनाव करना आना चाहिए। जीवन में परिस्थितियाँ और प्रारब्ध सदा द्वंद्व पैदा करते हैं। द्वंद्व जीवन में न आए, ऐसा संभव नहीं है, परंतु हमें इससे उबरना आना चाहिए।

अपनी बौद्धिक क्षमता को सबसे पहले किसी विषय की गहराई में लगाना चाहिए। और फिर उसके विस्तार में जाना चाहिए। इससे विषय की बारीकी के साथ उसके अनेक पहलुओं के बीच संबंध स्थापित किया जा सकता है। इस प्रकार कई नए आयाम विकसित होते हैं। किसी को भी कार्य या विषय के प्रति प्राप्त यह कुशलता आज भी जिंदगी की समीक्षा करने में काम आ सकती है। जिंदगी में भटकाव और बिखराव न हो; इस हेतु अपने निर्दिष्ट लक्ष्य के अनुरूप मन को गतिशील बनाए रखने में भी बुद्धि की अहम भूमिका है।

जिंदगी की सबसे बड़ी समस्या है—मन एवं बुद्धि को अनियंत्रित एवं अनियमित रखना। मन और बुद्धि को नियंत्रित न करने पर ये जंगली जानवरों के समान इधर-उधर भटकते रहते हैं और बड़ी उलझनें खड़ी करते हैं। इन्हें एक चिंतन के इर्द-गिर्द घुमा देना चाहिए। इसी प्रक्रिया से हमारी दृष्टि लक्ष्य को परख सकती है, अपनी उपलब्धि को देख सकती है। बौद्धिक ऊर्जा एक बिंदु पर आ सिमटे तो चमत्कार घट सकता है। असंभव संभव हो सकता है। अत: बुद्धि को अनुशासित करके ही समस्त इंद्रियों को उसके कार्य में लगाया जा सकता है। यह लय न केवल भौतिक सफलता दे सकती है, बल्कि आत्मिक उत्थान की राह भी खोल सकती है।

बौद्धिक क्षमता की सार्थकता तभी सिद्ध होगी, जब हमें चुनौती का सामना करना आ जाए। चुनौती को स्वीकार करके खतरा उठा सकने वाले ही विजेता बनते हैं। कमजोर मानसिकता का व्यक्ति सदैव पराजित होता है और सुदृढ़-साहसी व्यक्ति विजेता बनता है। इस प्रकार बुद्धि का संपदा के रूप में उपयोग किया जा सकता है तथा व्यक्तित्व की अंतर्निहित शक्तियों को जगाया जाना संभव हो सकता है। ❑

किसी व्यक्ति ने सुना—बीस फुट मिट्टी खोद लेने से पानी निकल आता है; कुआँ बन जाता है। वह कुआँ खोदने में लग गया। बीस की जगह पच्चीस फुट खुद गया फिर भी पानी नहीं निकला। वह व्यक्ति उस आदमी के पास गया और पानी न निकलने की शिकायत की।

अगले दिन उस व्यक्ति ने जाकर देखा तो पाया कुआँ खोदा तो गया पर गहराई में नहीं लंबाई में। उसने कहा—"भाई! इतना परिश्रम करने की अपेक्षा पहले विधि पूछ लेते तो अच्छा था। ज्ञान की सार्थकता उसे पूरी तरह समझ लेने में ही है। अधूरी वार्त्ता सुनकर कार्य आरंभ करने वाले धोखा ही खाते हैं।"

काम की जब भी योजना बनाई जाए, तो उसे अच्छी तरह सोच-समझ लेना चाहिए। शेखचिल्ली जैसी कपोल-कल्पना तो अनगिनत कर सकते हैं, पर जीवन में वही सही उतर पाते हैं, जो कदम सँभाल-सँभालकर रखते हैं, एक भी पल गँवाते नहीं।

महामानव बनते हैं, स्वाध्याय से

महामानव अपनी धरती के देवता हैं। जब तक वे शरीर धारण किए रहते हैं, तब तक अपने कृत्यों से संसार को लाभान्वित करते हैं और जब वे अदृश्य हो जाते हैं, तो अपनी ऊर्जा उन कृतियों के द्वारा बिखेरते रहते हैं, जो उन्होंने अपनी जीवनगाथा के रूप में पीछे वालों के लिए छोड़ी हैं। इसी प्रकार उनके ज्ञान और अनुभवों का संचय उन ग्रंथों में विद्यमान रहता है, जो उनके द्वारा सृजे गए। यह उन उत्तराधिकारियों का काम है कि उनके अनुदानों को सुनें, समझें, हृदयंगम करें और उस राजमार्ग पर चलने का प्रयत्न करें, जिस पर वे चले। यह समूची प्रक्रिया तभी सधती है, जब महामानवों द्वारा विनिर्मित साहित्य को हम ध्यानपूर्वक पढ़ें और श्रद्धापूर्वक उसका महत्त्व समझें।

गीता का कथन है—ज्ञान के समान पवित्र इस संसार में और कुछ नहीं। निर्वाह साधनों की ही तरह हमें सद्ज्ञान के संचय को भी महत्त्वपूर्ण कार्य मानना चाहिए।

ज्ञान एक प्रकाश है, जिसकी छत्रछाया में हम समीपवर्ती वस्तुओं के संबंध में यथार्थता से अवगत होते और उनका सही उपयोग कर सकने की स्थिति में होते हैं। सद्ज्ञान इसी को कहते हैं। आवश्यक नहीं कि इस संपदा को अपने अनुभव, चिंतन और मंथन से ही उपार्जित किया जाए। महामानवों द्वारा इतनी मात्रा में सद्ज्ञान छोड़ा गया है कि उसे बटोरने भर से काम चल सकता है। इसी प्रक्रिया को सद्ग्रंथों का स्वाध्याय कहते हैं। उसकी उपयोगिता आजीविका उपार्जन से किसी भी प्रकार कम नहीं है।

कन्फ्यूशियस का कथन है—"रातभर प्रार्थना करने की अपेक्षा एक घंटे का सद्ज्ञान संग्रह अधिक अच्छा है। विचार की कलम और स्याही कम पवित्र नहीं है। दूसरों की कठिनाइयों को हलकी करने के लिए उनके साधन जुटाना ही उदारता नहीं है, वरन यह भी है कि उन्हें उलझाने का कारण और समाधान बताकर आज और भविष्य में अपने बलबूते त्राण पाने का रास्ता बताया जाए।"

ज्ञान की उपासना मानवता की सेवा है। इसके लिए स्वाध्याय का आश्रय लेना अनिवार्य है। किंतु यह स्वाध्याय ऐसे ग्रंथों का होना चाहिए, जो हमें यथार्थता के समीप पहुँचा सके और प्रमाणित व्यक्तियों द्वारा प्रस्तुत किया गया हो।

एक स्पेनिश पत्रकार ने एक बार महात्मा गांधी से प्रश्न किया—"आप जब जिस रूप में हैं, वह बनने की प्रेरणा कहाँ से मिली?" गांधी जी ने बताया, भगवान श्रीकृष्ण, महापुरुष ईसा, दार्शनिक रस्किन और संत टॉल्स्टॉय से।

पत्रकार अचंभे में आ गया। उसने अनुभव किया—इनमें से कोई भी तो गांधी जी के समय में नहीं रहा, पर फिर उनसे प्रेरणा वाली बात कैसे कहते हैं? उसने अपनी आशंका व्यक्त

की, इस पर गांधी जी बोले—''महापुरुष सदैव बने नहीं रहते, यह ठीक है। समय के साथ उनको भी जाना पड़ता है; किंतु विचारों, पुस्तकों के रूप में उनकी आत्मा इस धरती पर चिरकाल तक बनी रहती है, जिन्हें लोग कागज के निर्जीव पन्ने समझते हैं, उनकी आत्मा उन्हीं में लिपटी हुई रहती है, उनमें सदैव जीवित रहे लोगों को दीक्षित करने, संस्कारवान बनाने और जीवन-पथ पर अग्रसर होने के लिए शक्ति, प्रकाश और प्रेरणाएँ देने का सामर्थ्य बना रहता है। मुझे भी इसी प्रकार उनसे प्रकाश मिला है।'' स्वाध्याय वस्तुत: आत्मोन्नति का ऐसा ही साधन है।

विद्याध्ययन से, स्वाध्याय से कभी भी प्रमाद नहीं करना। ऋषियों की इस शिक्षा में यही तथ्य सन्निहित है कि व्यक्ति के आत्मिक परिमार्जन की प्रक्रिया उसी से संपन्न होती है। दीन-हीन जीवन को ऊँचा उठाने की शक्ति उसी से मिलती है। इतिहास साक्षी है कि संसार में जितने भी सफल व्यक्ति और महापुरुष हुए हैं, उनको आगे ले जाने वाला यान किसी-न-किसी पुस्तक की प्रेरणा के रूप में ही मिला है।

स्वाध्याय से मनुष्य का विचारबल उसी तरह पोषण पाता है, जिस तरह खेतों की उर्वरता बढ़ाने के लिए नहरों से लिया गया जल। यह सौभाग्य हर किसी के लिए सुलभ है। हर तरह की दिशाएँ भी समुपलब्ध रहती हैं, मनुष्य जिस किसी भी दिशा में आगे बढ़ना चाहे, उसे उसी तरह का प्रशिक्षण और मार्गदर्शन घर बैठे मिल सकता है।

पेरिस के 'लूव लला संग्रहालय' में एक पांडुलिपि नेपोलियन के हाथ की लिखी हुई रखी है। यह लगभग दो सौ विभिन्न पुस्तकों की सूची है, जिन्हें नेपोलियन बोनापार्ट ने किसी समय अपने स्वाध्याय के लिए चुना और मँगाया था। इन पुस्तकों में वीरतापूर्ण इतिहास, युद्धविद्या ही नहीं मानवीय जीवन की समस्याओं पर लिखे गए महापुरुषों के निबंध और उपन्यास भी सम्मिलित थे। नेपोलियन जैसे तानाशाह का यह पुस्तक-प्रेम अन्यत्र नहीं था। यदि उसने अपनी यह अभिरुचि विकसित न की होती तो 23 वर्ष की आयु में ही 'बिग्रेडियर जनरल' के पद तक पहुँचने की योग्यता, क्षमता और विचार-बल उसे नहीं मिल सका होता। पुस्तकें ज्ञान और अनुभव का वह सार होती हैं, जो दूसरे लोग कंटकाकीर्ण मार्ग पर चलकर प्राप्त करते हैं और अपने पीछे की पीढ़ी के लिए सरल, सुबोध और निर्विघ्न राजपथ के रूप में छोड़ जाते हैं; जिन पर चलकर कोई भी व्यक्ति सुविधापूर्वक, सुरक्षापूर्वक इच्छित लक्ष्य तक जा पहुँचता है।

पं० जवाहरलाल नेहरू को निरंतर पढ़ने का पैतृक गुण उन्हें पिता श्री मोतीलाल नेहरू से मिला था। वे कहा करते थे एकांत की सर्वोत्तम मित्र पुस्तकें ही हो सकती हैं। उनसे जितनी शांति मिलती है, उतना ही विचारों को पोषण और आत्मा को बल। यह बात उनके जीवन से ही चरितार्थ होती है। जिन दिनों वे कैंब्रिज में पढ़ते थे, 'टाउनऐड मेरी डिथेथ' की सुप्रसिद्ध पुस्तक 'एशिया एंड यूरोप' उनके हाथ लग गई। अब तक जवाहरलाल नेहरू ने कभी राजनीति का विचार तक नहीं किया था। किंतु इस पुस्तक ने एकाएक

उनके जीवन की धारा को बदल दिया और वे राजनीति में रुचि लेने लगे। मेरी डिथ एक तरह से उन्हें उँगली पकड़कर आगे बढ़ाते रहे और उसी मार्गदर्शन का यह प्रतिफल था कि पं० जवाहरलाल नेहरू न केवल भारत, एशिया, अपितु समूचे विश्व के गणमान्य राजनेताओं की सूची में जा बैठे।

जॉर्ज बर्नार्ड शॉ को 'शॉ' बनाने का श्रेय भी पुस्तकों को ही है। उनकी माँ ने जब वे 9 वर्ष के थे तभी स्वाध्याय की अभिरुचि उत्पन्न कर दी थी। 'शॉ' के पिता अक्सर कहा करते थे—"बच्चे को खेलने-कूदने भी दिया करो।" माँ कहती—"पुस्तकों में सिनेमा, खेल-कूद, यात्रा-भ्रमण, इतिहास, दर्शन आदि सभी कुछ है और वह भी है, जो बच्चे की विचारशक्ति के लिए ईंधन का कार्य करेगा। उसकी विचार-ऊष्मा को निरंतर प्रज्वलित रखेगा।" 7 वर्ष से 9 वर्ष तक वे पहले ही बाइबिल पढ़ चुके थे, जिससे उनका मन आध्यात्मिक भावनाओं में संस्कारित हो चुका था। विभिन्न विद्वानों के साहित्य को पढ़ने से न केवल उनकी तार्किक शक्ति, बौद्धिक पैनापन उभरा, अपितु चिंतन के नए आयामों का उदय हुआ। जिसके मस्तिष्क में दो विचार हों, उनसे वह अधिक-से-अधिक चार बन सकता है, किंतु हजार विचारों वाले के लिए लाख चिंतन भी कम हैं।

भारतीय इतिहास के नक्षत्र सुभाष चंद्र बोस, लाल बहादुर शास्त्री, डॉ० राधाकृष्णन और सरदार बल्लभ भाई पटेल आदि सबने जीवन में जो कुछ पाया, वह सब उनकी स्वाध्याय-सुरुचि का वरदान था। जिसने उनकी प्रसुप्त क्षमताओं को अनेक गुना सक्रिय बना दिया। विचार की सत्ता हर व्यक्ति में होती है, स्वाध्याय उसे पैना कर उपयोगी बना देता है। जिनकी पढ़ने में अभिरुचि नहीं होती; यह कहना चाहिए कि उनके विचारों को खाद, पानी नहीं मिलता और वे फलने-फूलने की अपेक्षा मुरझाकर नष्ट हो जाते हैं। निराशाएँ, चिंताएँ, उद्विग्नताएँ और व्याधियाँ ऐसे ही लोगों को घेरती हैं। स्वाध्यायशील तो आपदाओं में हँसी-खुशी और प्रसन्नता का जीवन जी लेते हैं। ❐

एक अमीर ने किसी संत की बहुत सेवा की। उसकी सेवा से संत का जी भर आया। जब वे वहाँ से चलने लगे तो अमीर ने प्रार्थना की कि कुछ ऐसा उपहार देते जाइए, जिसके सहारे मैं भगवान तक पहुँच सकूँ।

संत ने उसे तीन चीजें दीं—(1) मोम, (2) सूई, (3) थोड़े-से बाल और कहा इन्हें गाँठ में बाँध लो।

अमीर ने इन चीजों को देखा और अचंभे से पूछा—"इनके सहारे मैं कैसे भगवान से मिल सकूँगा?"

संत ने कहा—"मोमबत्ती की तरह खुद जलो और दूसरों के लिए रोशनी पैदा करो। सूई की तरह अपने को उघारा रखो पर दूसरों के छेद बंद कर दो। बालों की तरह मुलायम और लचीले रहो। ये तीन ही सहारे भगवान तक पहुँचने के हैं, सो इन्हें बाँध लो, इनके सहारे भगवान तक पहुँच जाओगे।"

पूजा-पाठ और कर्मकांड तो मन को एकाग्र करने के तरीके हैं। सच्चा ईश्वरभक्त तो वही है जिसने अपने मन और आचरण को पवित्र बना लिया है।

जैसे विचार होंगे वैसा जीवन बनेगा

मनुष्य का जीवन उसके विचारों का प्रतिबिंब है। सफलता-असफलता, उन्नति-अवनति, तुच्छता-महानता, सुख-दु:ख, शांति-अशांति आदि सभी पहलू मनुष्य के विचारों पर निर्भर करते हैं। किसी भी व्यक्ति के विचार जानकर उसके जीवन का नक्शा सहज ही मालूम किया जा सकता है। मनुष्य को कायर-वीर, स्वस्थ-अस्वस्थ, प्रसन्न-अप्रसन्न कुछ भी बनाने में उसके विचारों का महत्त्वपूर्ण हाथ होता है। तात्पर्य यह है कि अपने विचारों के अनुरूप ही मनुष्य का जीवन बनता-बिगड़ता है। अच्छे विचार उसे उन्नत बनाएँगे, तो हीन विचार मनुष्य को गिराएँगे।

स्वामी रामतीर्थ ने कहा है—"मनुष्य के जैसे विचार होते हैं, वैसा ही उसका जीवन बनता है।" स्वामी विवेकानंद ने कहा था—"स्वर्ग और नरक कहीं अन्यत्र नहीं, इनका निवास हमारे विचारों में ही है।" भगवान बुद्ध ने अपने शिष्यों को उपदेश देते हुए कहा था—"भिक्षुओ! वर्तमान में हम जो कुछ हैं अपने विचारों के ही कारण और भविष्य में जो कुछ भी बनेंगे, वह भी अपने विचारों के ही कारण।" शेक्सपीयर ने लिखा है—"कोई वस्तु अच्छी या बुरी नहीं है। अच्छाई-बुराई का आधार हमारे विचार ही हैं।" ईसामसीह ने कहा था—"मनुष्य के जैसे विचार होते हैं, वैसा ही वह बन जाता है।"

संसार के समस्त विचारकों ने एक स्वर से विचारों की शक्ति और उसके असाधारण महत्त्व को स्वीकार किया है। संक्षेप में जीवन की विभिन्न गतिविधियों का संचालन करने में हमारे विचारों का ही प्रमुख हाथ रहता है। हम जो कुछ भी करते हैं, विचारों की प्रेरणा से ही करते हैं।

संसार में दिखाई देने वाली विभिन्नताएँ, विचित्रताएँ भी हमारे विचार का प्रतिबिंब ही हैं। संसार मनुष्य के विचारों की ही छाया है। किसी के लिए संसार स्वर्ग है तो किसी के लिए नरक। किसी के लिए संसार अशांति, क्लेश, पीड़ा आदि का आगार है तो किसी के लिए सुख-सुविधासंपन्न उपवन। एक-सी परिस्थितियों में एक-सी सुख-सुविधा-समृद्धि में युक्त दो व्यक्तियों में भी अपने विचारों की भिन्नता के कारण असाधारण अंतर पड़ जाता है। एक जीवन में प्रतिक्षण सुख-सुविधा, प्रसन्नता, खुशी, शांति, संतोष का अनुभव करता है; तो दूसरा पीड़ा, शोक, क्लेशमय जीवन बिताता है। इतना ही नहीं कई व्यक्ति कठिनाई का अभावग्रस्त जीवन बिताते हुए भी प्रसन्न

रहते हैं तो कई समृद्ध होकर भी जीवन को नारकीय-यंत्रणा समझते हैं। एक व्यक्ति अपनी परिस्थितियों में संतुष्ट रहकर जीवन के लिए भगवान को धन्यवाद देता है, तो दूसरा अनेक सुख-सुविधाएँ पाकर भी असंतुष्ट रहता है। दूसरों को कोसता है, महज अपने विचारों के ही कारण।

प्राचीन ऋषि-मुनि आरण्यक जीवन बिताकर, कंदमूल फल खाकर भी संतुष्ट एवं सुखी जीवन बिताते थे और धरती पर स्वर्गीय अनुभूति में मग्न रहते थे। एक ओर आज का मानव है, जो पर्याप्त सुख-सुविधा, समृद्धि, ऐश्वर्य, वैज्ञानिक साधनों से युक्त जीवन बिताकर भी अधिक क्लेश, अशांति, दुःख, उद्विग्नता से परेशान है। यह मनुष्य के विचार-चिंतन का ही परिणाम है। जीवन में सुख-शांति-प्रसन्नता अथवा दुःख, क्लेश, अशांति, पश्चात्ताप आदि का आधार मनुष्य के अपने विचार हैं अन्य कोई नहीं।

संसार एक शीशा है। इस पर हमारे विचारों की जैसी छाया पड़ेगी, वैसा ही प्रतिबिंब दिखाई देगा। विचारों के आधार पर ही संसार सुखमय अथवा दुःखमय अनुभव होता है। पुरोगामी उत्कृष्ट, उत्तम विचार जीवन को ऊपर उठाते हैं, उन्नति, सफलता, महानता का पथ-प्रशस्त करते हैं तो हीन, निम्नगामी कुत्सित विचार जीवन को गिराते हैं।

विचारों में एक प्रकार की चेतना शक्ति होती है। किसी भी प्रकार के विचारों के एक स्थान पर केंद्रित होते रहने पर उनकी सूक्ष्म चेतना शक्ति घनीभूत होती जाती है। प्रत्येक विचार आत्मा और बुद्धि के संसर्ग से पैदा होता है। बुद्धि उसका आकार-प्रकार निर्धारित करती है, तो आत्मा उसमें चेतना फूँकती है। इस तरह विचार अपने आप में एक सजीव, किंतु सूक्ष्म तत्त्व हैं। मनुष्य के विचार एक तरह की सजीव तरंगें हैं; जो जीवन, संसार और यहाँ के पदार्थों को प्रेरणा देती रहती हैं। इन सजीव विचारों का जब केंद्रीयकरण हो जाता है, तो एक प्रचंड शक्ति का उद्भव होता है। स्वामी विवेकानंद ने विचारों की इस शक्ति का उल्लेख करते हुए बताया है—"कोई व्यक्ति भले ही किसी गुफा में जाकर विचार करे और विचार करते-करते ही वह मर भी जाए तो वे विचार कुछ समय उपरांत गुफा की दीवारों का विच्छेद कर बाहर निकल पड़ेंगे और सर्वत्र फैल जाएँगे। वे विचार तब सबको प्रभावित करेंगे।"

शाप, वरदान, भविष्यवाणी विचारों की इस सूक्ष्मशक्ति का ही परिणाम हैं। ऋषि-मुनियों के पूर्व स्थानों, तपोवनों में आज भी जाने पर वहाँ मनुष्य को उनके उत्कृष्ट शक्तिशाली विचारों का स्पर्श प्राप्त होता है। इतना ही नहीं, भावनापूर्वक किसी भी महापुरुष से मानसिक संपर्क स्थापित किया जाए, तो उसके विचार भाव तत्क्षण वातावरण से दौड़कर आएँगे और सचमुच मनुष्य को महापुरुष का मानसिक सत्संग मिलेगा।

मनुष्य जैसे विचार करता है, उसकी सूक्ष्म तरंगें विश्वाकाश में फैल जाती हैं। सम स्वभाव

के पदार्थ एकदूसरे की ओर आकर्षित होते हैं; इस नियम के अनुसार उन विचारों के अनुकूल दूसरे विचार आकर्षित होते हैं और व्यक्ति को वैसी ही प्रेरणा देते हैं। एक ही तरह के विचार घनीभूत होते रहने पर प्रचंड शक्ति धारण कर लेते हैं और मनुष्य के जीवन में जादू की तरह प्रभाव डालते हैं।

जीवन के अन्य पहलुओं की तरह ही मनुष्य के स्वास्थ्य का बहुत कुछ संबंध उसके विचारों पर ही होता है। मन:शक्ति, विचार क्षण-क्षण मनुष्य के स्वास्थ्य पर प्रभाव डालते रहते हैं। जो लोग अपने आप को रोगी, बीमार कमजोर महसूस करते हैं, उनका शरीर भी वैसा ही बन जाता है। शरीर एक यंत्र है, जो विचारों के अनुसार मन:शक्ति की प्रेरणा से काम करता है। जैसे विचार होंगे, वैसा ही प्रभाव शरीर पर दृष्टिगोचर होगा। हीन विचार, शोक, चिंता आदि के कारण रक्त का प्रवाह मंद हो जाता है और शरीर में जड़ता, शिथिलता पैदा हो जाती है। दिल की धड़कन मंद हो जाती है। स्नायु-संस्थान सुस्त हो जाता है। इसी तरह उत्तेजना, क्रोध, आवेश के विचारों से शरीर पर भारी तनाव पड़ता है। रक्तचाप बढ़ जाता है। शरीर में एक प्रकार का विष उत्पन्न होने लगता है। शरीर के सभी अंगों का कार्य अस्त-व्यस्त हो जाता है। इस तरह के लोग जल्दी ही अस्वस्थ होकर रोगी जीवन बिताते हैं। वैज्ञानिक खोजों के आधार पर यह सिद्ध हो गया है कि मनुष्य की बीमारी, अस्वस्थता का प्रधान कारण मानसिक स्थिति ही होती है। अपने आप को कमजोर, रोगी, बीमार समझने वाले लोग सदैव अस्वस्थ ही रहते हैं।

विचारों का हमारे जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है। अपने सुख-दु:ख, हानि-लाभ, उन्नति-अवनति, सफलता-असफलता, सभी कुछ हमारे अपने विचारों पर निर्भर करते हैं। जैसे विचार होते हैं, वैसा ही हमारा जीवन बनता है। संसार कल्पवृक्ष है, इसकी छाया तले बैठकर हम जो भी विचार करेंगे, वैसे ही परिणाम प्राप्त होंगे। जो अपने आप को सद्विचारों से

गरीबी उस व्यक्ति के पाँवों को रोक नहीं सकती, जो अपने पैरों खड़े होने की हिम्मत रखता है। ऐसा व्यक्ति किसी भी कार्य से घृणा नहीं करता।

भरे रखते हैं, वे पद-पद पर जीवन के महान वरदानों से विभूषित होते हैं; सफलता, महानता, सुख-शांति, प्रसन्नता के परितोष उन्हें मिलते हैं। इसके विपरीत जो अपने आप को हीन, अभागा, बदनसीब समझते हैं, उनका जीवन भी दीन-हीन बन जाता है। विचारों से गिरे हुए व्यक्ति को फिर परमात्मा भी नहीं उठा सकता। जो अंधकारमय निराशावादी विचार रखते हैं उनका जीवन कभी उन्नत और उत्कृष्ट नहीं बन सकता। मनुष्य को वही मिलता है, जैसे उसके विचार होते हैं। ❑

पुदीना के स्वास्थ्यकारक प्रयोग

पुदीना ग्रीष्मकाल में अत्यंत स्वास्थ्यप्रद एवं स्वास्थ्यरक्षक घरेलू औषधि के तौर पर उपयोगी है।

पुदीना हमारे देश के घर-घर में उपयोगी होने के कारण बाग-बगीचों में, क्यारियों में लगाया जाता है। यह प्राकृतिक रूप से कश्मीर एवं हिमालय क्षेत्र में स्वत: ही उगता है। गरमी के दिनों में पाचन संबंधी विकृतियों को रोकने के लिए पुदीना बेहद कारगर घरेलू औषधि है। उलटी, दस्त, गैस, अपच, अफारा में गोली या स्वरस दोनों प्रकार से सेवन करना लाभप्रद होता है। पुदीना में विद्यमान फाइटोन्यूट्रिएट्स कई बीमारियों से बचाते हैं। पुदीना के पत्तों का प्रयोग सलाद के साथ किया जाता है। पुदीना की स्वादिष्ट चटनी भी सेवन करने का प्रचलन है। दही का रायता इत्यादि पेय में भी पुदीना स्वाद एवं स्वास्थ्य दोनों बढ़ाने में मददगार है। दोपहर के भोजन के बाद दही का रायता अमृततुल्य पेय माना है।

पुदीना में एंटी बैक्टीरिया एवं एंटी इन्फ्लेमेंट्री गुण भी हैं। पुदीना के सेवन से मुँह की बदबू दूर होती है, पेट की मरोड़ पुदीने के सेवन से दूर होती है। नीबू तथा पुदीना के साथ ब्लैक-टी एक स्वास्थ्यवर्द्धक पेय के रूप में उपयोगी है।

ताजा पुदीना प्राय: सब्जी-बाजार में उपलब्ध हो जाता है। पुदीना के पत्ते तथा डंठलों को स्वच्छ पानी से अच्छी तरह धो लेना चाहिए, इसे ताजा उपयोग में ला सकते हैं। यदि सुखाकर रखना हो तो पत्तों को पानी से धोने के बाद छाया में पत्तों को सुखा लेना चाहिए। अच्छी तरह सूख जाने पर पीसकर चूर्ण बनाकर किसी डिब्बे में सुरक्षित रख लेना चाहिए। पुदीने के पत्ते धोकर, पीसकर रस निकालकर गन्ने के रस के साथ मिलाकर पीने का उत्तर-भारत में प्रचलन है।

आयुर्वेदिक गुण-धर्म

पुदीना कफनिवारक, वातनाशक, गर्भाशय संकोचक, दरदनाशक, दुर्गंधनाशक, मूत्र बढ़ाने वाला, विषनाशक, ज्वरनाशक, त्वचा संबंधी विकारों को दूर करने वाला है। पाचनशक्ति की कमी, मूत्र का संक्रमण, कृमि रोग, दंत रोगों को दूर करता है। हृदय के लिए हितकारी होता है।

घरेलू उपयोग

◆ **प्रसूतिका ज्वर में**—प्रसूति के बाद ज्वर होने पर ताजे पुदीने का 10 ग्राम रस पिलाने से लाभ मिलता है, इससे गर्भाशय की शुद्धि होती है।

◆ **हैजा में**—पुदीना का रस 10 ग्राम लें, उसमें 5 ग्राम नीबू का रस मिलाकर दिन में 3 बार पिलाने से लाभ होता है।

◆ **टाइफॉइड में**—पुदीना, वनतुलसी और काली तुलसी तीनों के पत्तों का 15 ग्राम रस निकालकर उसमें 4 ग्राम मिसरी मिलाकर नित्य पिलाने से लाभ होता है। टाइफॉइड में

एक माह तक फलों का रस पथ्य के रूप में देना चाहिए। मिर्च, मसाले तथा तले खाद्यों से परहेज रखें। हलका सुपाच्य, स्वास्थ्यकारक आहार चिकित्सक के मार्गदर्शन के अनुरूप लेना चाहिए।

♦ **ज्वर में**—पुदीना 15 ग्राम पत्ते और अदरक गाँठ 1 ग्राम को 200 ग्राम पानी में उबालकर, काढ़ा बनाकर पिलाने से लाभ होता है।

♦ **उदरशूल में**—पुदीना के एक चम्मच रस में 3-4 नग काली मिर्च पीसकर शहद के साथ चटाने से लाभ होता है।

♦ **उलटी में**—पुदीना रस 6 ग्राम, सेंधा नमक 2 ग्राम पीसकर ठंढे पानी में घोलकर छान लें, थोड़ी-थोड़ी मात्रा में पिलाने से लाभ होता है। पित्त-प्रकोप के कारण उलटी होने पर थोड़ी मिसरी मिलाकर सेवन कराएँ।

♦ **अजीर्ण में**—5 ग्राम पुदीना रस के साथ 5 ग्राम जीरा तथा 1 ग्राम नमक मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है।

♦ **उलटी, दस्त, वायु विकार और अपच में**—पुदीना को छाया में सुखाकर बनाए गए 25 ग्राम चूर्ण को 2 गिलास पानी में उबालकर, काढ़ा बनाकर छान लें। 250 ग्राम नीबू रस सहित 500 ग्राम मात्रा में देशी खाँड़ की चाशनी में मिलाकर रख लें। इस तैयार औषधि को 20 ग्राम की मात्रा में लेकर सेवन करने से बढ़ा हुआ पित्तविकार दूर हो जाता है। भूख बढ़ती है, पाचनशक्ति प्रबल होती है।

♦ **गले की खराश में**—गले के दरद एवं खराश होने पर 5 बूँद रस बताशे में या शहद में 3-4 बार सेवन करने से गले की खराश दूर होती है।

♦ **शीतपित्ती होने पर**—5 ग्राम पुदीना को पीसकर जल में घोलकर छान लें तथा स्वादानुसार चीनी मिलाकर सुबह-शाम पीने से लाभ होने लगता है।

♦ **कष्टार्तव में**—स्त्रियों को कष्टप्रद मासिक धर्म की शिकायत होने पर पीड़ा तथा रजोरोध मिटाने के लिए पुदीने का रस थोड़ा गरम कर 10 ग्राम तक की मात्रा में देने से लाभ होता है।

♦ **बर्र, बिच्छू तथा चूहे के दंश पर**—पुदीने का रस दंशस्थल (त्वचा) पर लगाएँ तथा पुदीने के 4-5 पत्ते पान में रखकर खाने से विकार नष्ट होते हैं।

♦ **कफ-विकार में**—फेफड़े में कफ जमा होने पर कफ-निवारण के लिए 5 ग्राम पुदीने के पत्तों को 3-4 अंजीर के साथ पीसकर सेवन करने से कफ का निष्कासन होता है।

♦ **घाव बिगड़ने पर**—पुदीने के पत्ते पीसकर लेप करने से घाव ठीक होता है। संक्रमण नष्ट होता है।

♦ **त्वचा के काले दाग में**—त्वचा की कांति बढ़ाने के लिए काले दागों के निवारण के लिए पुदीना के रस को बराबर मात्रा में रेक्टिफाइड स्प्रिट के साथ पकाकर रख लें। इस औषधि को लगाने से काले दाग मिटते हैं।

♦ **आंत्रकृमि होने पर**—पुदीना के ताजे पत्तों का रस निकालकर पीने से तथा पुदीने के रस की वस्ति देने से आंत्रकृमि नष्ट होते हैं।

♦ **पीनस में**—पुदीने का रस 4-5 बूँद नाक में टपकाने से लाभ होता है।

♦ **कान दरद में**—कान में पुदीने का रस 2-3 बूँद टपकाने से लाभ होता है।

◆ **मुँह में छाला होने पर**—पुदीना के पत्तों को पीसकर जीभ पर लेप करने से लाभ होता है।

◆ **सरदी-जुकाम का कष्ट होने पर**—पुदीना की पत्तियाँ पानी में डालकर आग पर गरम करें। नासिका एवं मुँह में भाप लेने से लाभ होता है।

◆ **अरुचि में**—पुदीना, खजूर, मुनक्का जीरा तथा जटामांसी, हींग और काली मिर्च स्वादानुसार मिलाकर चटनी बना लें, नीबू का रस मिलाकर खाएँ यह रुचिकारक, स्वादिष्ट चटनी भूख एवं पाचनशक्ति मजबूत करने में उपयोगी है।

◆ **उलटी, दस्त, मरोड़, जी-मिचलना तथा हैजा में**—पुदीने के 50 ग्राम ताजे पत्ते को 200 ग्राम रेक्टिफाइड स्प्रिट में मिलाकर शीशी में रख दें। 8 दिन बाद हरे रंग का आसव तैयार हो जाएगा। इसे छानकर काँच की शीशी में बंद कर रखें। इस औषधि की मात्रा 5 से 10 बूँद देने से लाभ होता है। यह हैजा में भी उपयोगी है। यह औषधि बनाकर हर घर में रखना चाहिए। ग्रीष्मकालीन इन रोगों में प्राथमिक उपचार के लिए उपयुक्त है।

◆ **रायता के रूप में**—पुदीने की पत्तियों को छाया में सुखाकर या ताजी पत्तियों को पीसकर दही या छाछ में मिलाकर स्वादानुसार काला नमक मिलाकर रोचक रायता बनाया जाता है। दोपहर के भोजन के अंत में रायता पीना अत्यंत लाभप्रद होता है।

◆ **शीतल पेय के रूप में**—कच्चे आम को उबालकर उसका गूदा निकालकर पुदीने की पत्तियों को पीसकर स्वादानुसार जीरा, सेंधा नमक, मिसरी या देशी खाँड़ मिलाकर पना बनाकर पीने से गरमी में लू से बचाव होता है।

◆ **खट्टी-मीठी चटनी के रूप में**—पुदीना, कच्चा आम, हरी मिर्च, स्वादानुसार नमक और गुड़ मिलाकर पीस लें; यह खट्टी-मीठी चटनी भोजन के साथ रुचि पैदा करती है।

◆ **सलाद के साथ में**—पुदीना की पत्ती सलाद में मिलाकर खाने से औषधि का काम करती है। यह हानिकारक कीटाणुओं को नष्ट करती है। इसे खीरा, ककड़ी, गाजर, मूली, पत्तागोभी, टमाटर, चुकंदर, धनिया-पत्ती, शिमला मिर्च आदि के सलाद के साथ मिलाकर खाना चाहिए। ❑

एक लकड़हारा जंगल से लकड़ी काटकर किसी प्रकार दुःख और कष्ट सहते हुए अपने दिन व्यतीत करता था। एक दिन वह जंगल से पतली-पतली लकड़ी सिर पर ला रहा था कि अकस्मात् कोई मनुष्य उसी रास्ते से जाते-जाते उसे पुकारकर बोला—"बच्चा, आगे बढ़ जा।" दूसरे दिन वह लकड़हारा उस मनुष्य की बात याद कर कुछ आगे बढ़ा तो मोटी-मोटी लकड़ियों का जंगल उसको दीख पड़ा। उस दिन उससे जहाँ तक बना लकड़ी काट लाया और बाजार में बेचकर उसने पहले दिन से अधिक पैसा कमाया। तीसरे दिन फिर मन में विचार करने लगा—"उस महात्मा ने तो मुझे आगे बढ़ जाने को कहा था। भला आज और थोड़ा आगे बढ़कर तो देखूँ।" यह सोचकर वह आगे बढ़ गया और उसे एक चंदन का वन दिखाई पड़ा। उस दिन उसने चंदन की लकड़ी बेचकर और अधिक रुपये कमाए। दूसरे दिन उसने फिर मन में विचार किया कि मुझे तो उन्होंने आगे ही जाने को कहा है, यह विचार कर और आगे जाकर उस दिन उसने ताँबे की खान पाई। वह यहीं पर न रुककर प्रतिदिन आगे ही बढ़ता गया और क्रमशः चाँदी, सोने और हीरे की खान पाकर बड़ा धनवान हो गया। भगवान ने यह मानव तन दिया है। हमें भी इसी प्रकार आगे बढ़ते हुए, अपने मानव जीवन को उन्नत बनाते चलना चाहिए।

(युग पुरुष की लेखनी से)

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय

अमृत कलश

33. षोडश संस्कार विवेचन -₹300

हमारी संस्कृति का मेरुदंड हमारे संस्कारों से भरा रहा है। ये संस्कार जन्म पूर्व से लेकर मरणोत्तर जीवन तक जुड़े हुए हैं। हमारे यहाँ षोडश संस्कार प्रमुख हैं। ये षोडश संस्कार आवश्यक क्यों हैं; हम जानना चाहेंगे—

- संस्कारों की पुण्य परंपरा तथा उसका पुनर्जीवन एक विज्ञानसम्मत प्रक्रिया।
- संस्कारों का प्रयोजन।
- संस्कार प्रकरण—पुंसवन एवं सीमांत संस्कार।
- मानसिक चिकित्सा की प्रखर पद्धति।
- नामकरण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म एवं कर्णवेध।
- विद्यारंभ, यज्ञोपवीत एवं विवाह संस्कार।
- वानप्रस्थ, अंत्येष्टि, मरणोत्तर संस्कार।
- जन्म दिवसोत्सव तथा विवाह दिवसोत्सव।
- युग संस्कार पद्धति, सूक्ति संहिता।

34. भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्त्व -₹150

भारतीय संस्कृति को देव संस्कृति कहकर सम्मानित किया गया है। यह संस्कृति सर्वोत्कृष्ट है। इसकी श्रेष्ठता का कारण क्या है; इसे जानने के लिए हम पढ़ें—

- संस्कृति का आध्यात्मिक आधार और स्वरूप।
- स्वाध्याय आत्मा का भोजन।
- भारतीय संस्कृति की मान्यताएँ।
- आस्तिकता, पुनर्जन्म, भक्ति, ब्राह्मणत्व।
- कर्मफल, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष।
- हिंदू समाज के कर्मकांड, परंपराएँ, पूजा-पद्धतियाँ।
- मूर्तिपूजा, स्वस्तिक, यज्ञोपवीत, शिखा, माला, तिलक।
- तीर्थयात्रा, धार्मिक मेले, देववाद, पंचदेव, दुर्गा-पूजा।
- शिव का तत्त्वज्ञान, तैंतीस कोटि देवता।
- श्राद्ध और तर्पण, मृतक के परिवार को मार्गदर्शन।
- भारतीय संस्कृति का सामाजिक पक्ष ब्रह्मचर्य, उपवास।
- सांस्कृतिक पुनरुत्थान एक महत्त्वपूर्ण कार्य।

35. समस्त विश्व को भारत के अजस्र अनुदान -₹150

भारत ने अत्यंत प्राचीनकाल से समस्त संसार का मार्गदर्शन किया है। किसी राष्ट्र की प्रगति-अवगति का आधार उस राष्ट्र के सांस्कृतिक मूल्य होते हैं। इनसे किस प्रकार संस्कृति का विस्तार संभव हो सकता है, इसके लिए जानें—

- देव संस्कृति की गौरव-गरिमा।
- ज्ञान-विज्ञान का धनी पुरातन भारत।
- सृष्टि का प्रथम मानव भारतभूमि पर जन्मा।
- स्वर्णिम अतीत पर एक दृष्टि।
- भारतीय संस्कृति का विराट स्वरूप।
- बृहत्तर भारत के अंगोपांग।
- तिब्बत, नेपाल, भूटान, सिक्किम, बर्मा, लंका, बंगदेश, जावा, सुमात्रा, बोर्नियो, चंपाराज्य, बाली, स्याम।

36. धर्मचक्र प्रवर्तन एवं लोक-मानस का शिक्षण -₹150

धर्मतंत्र में प्रचंड शक्ति-सामर्थ्य छिपी पड़ी है। धर्मतंत्र यदि परिष्कृत है तो उसकी शक्ति से मानव का निर्माण और समाज का मार्गदर्शन किया जा सकता है। इस लोक-मानस के शिक्षण के आधार हैं—

- धर्मतंत्र से लोक-शिक्षण, आदर्शवादिता का अभिनंदन।
- पूँजी जन-जागरण के उद्योगों में लगे।
- धर्मतंत्र की गरिमा और क्षमता।
- हमारी संस्कृति के स्तंभ—पर्व-त्योहार। दोनों नवरात्रों, रामनवमी, अक्षय तृतीया, गायत्री जयंती। गुरुपूर्णिमा, रक्षाबंधन, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी, गीता जयंती आदि।
- लोक-जागरण हेतु जन सम्मेलन, देवजीवन का अवसर।
- लोकरंजन और लोक-मंगल का समन्वय।
- धर्मचक्र प्रवर्तन-प्रव्रज्या का पुनर्जागरण।
- जीवन का उत्तरार्द्ध परमार्थ में नियोजित करें।

देवसंस्कृति के चार आधार

गौ, गंगा, गीता, गायत्री, अति पावन ये चार हैं,
पर गुरु होते सुरसंस्कृति के पावनतम आधार हैं।

गौ, गंगा हैं पुण्यदायिनी, गीता कर्म सिखाती है,
गायत्री मानवी बुद्धि को सत्पथ पर ले जाती है,

गुरु की कृपा-प्राप्ति से होते शुभ आचार-विचार हैं।
सद्गुरु होते सुरसंस्कृति के पावनतम आधार हैं।

गुरु से जुड़कर संस्कारों का जन्म हृदय में होता है,
सुरसंस्कृति के लिए मनुज मन में सद्भाव सँजोता है,

रग-रग से बहने लगतीं फिर पावन करुणा-धार हैं।
सद्गुरु होते सुरसंस्कृति के पावनतम आधार हैं।

सद्गुरु परमेश्वर को पाने का पथ हमें दिखाते हैं,
जहाँ कहीं उलझन होती है, सहज उसे सुलझाते हैं,

कदम-कदम पर करते रहते वह हम पर उपकार हैं।
सद्गुरु होते सुरसंस्कृति के पावनतम आधार हैं।

अपने संचित तप का सद्गुरु अंश शिष्य को देते हैं,
श्रेष्ठ आचरण वाले होते उनके बहुत चहेते हैं,

वसुंधरा लगती फिर उनको अपना ही परिवार है।
सद्गुरु होते सुरसंस्कृति के पावनतम आधार हैं।

LIBRARY
21-5-24

गुरु के सच्चे शिष्य पात्रता अपनी सतत बढ़ाते हैं,
जितना ऊँचा काम उच्च वे उतने ही हो जाते हैं,

अपने लिए कठोर, अन्य को रहते बहुत उदार हैं।
सद्गुरु होते सुरसंस्कृति के पावनतम आधार हैं।

—शचींद्र भटनागर

गायत्री तपोभूमि,मथुरा

शंखध्वनि द्वारा नववर्ष का अभिनंदन

नवरात्र साधना पर्व

युग निर्माण योजना
(मासिक)
R.N.I. No. 13636/64

प्र.ति. 17- 4 -2024
Regd No. Mathura- 024/2024-2026
Licensed to Post Without Prepayment
No: Agra/WPP-10/2024-2026

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

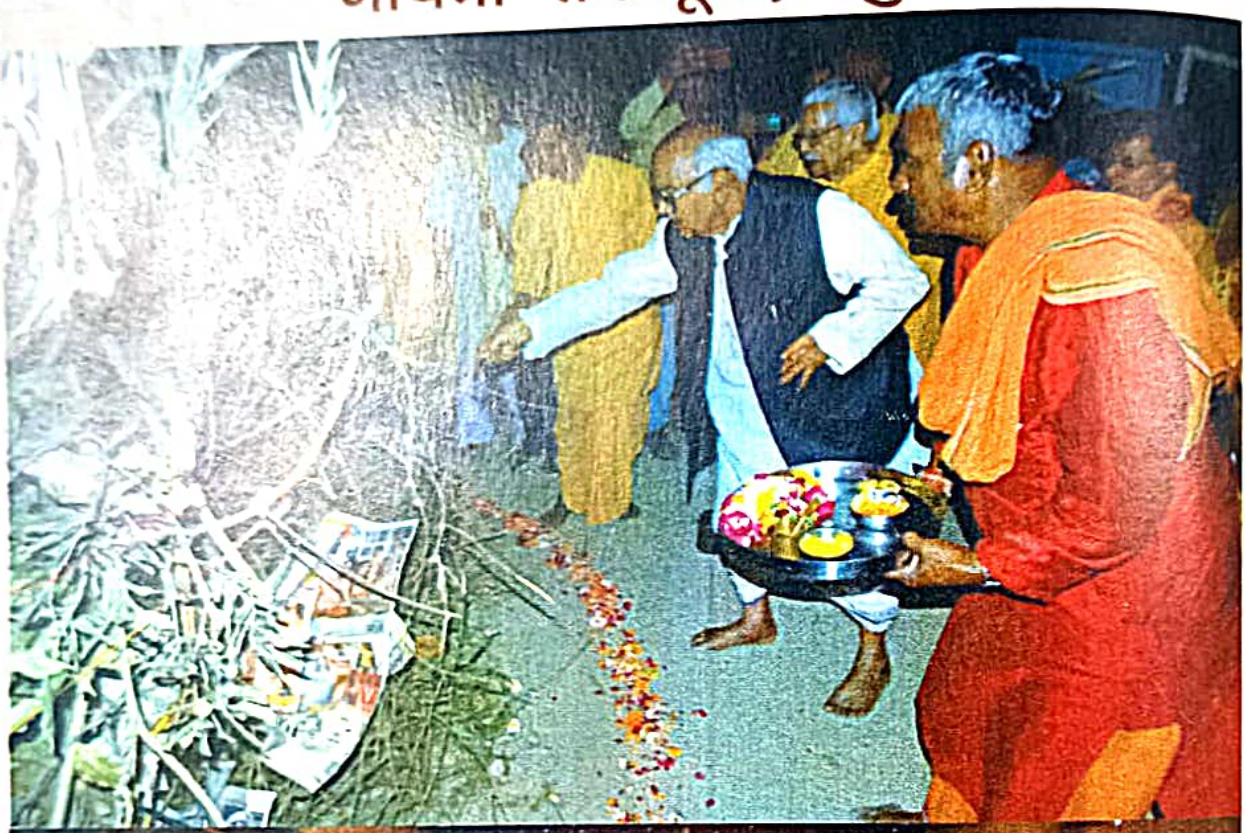

होलिका पर्व

स्वामी युग निर्माण योजना ट्रस्ट, मथुरा के लिए मृत्युंजय शर्मा द्वारा युग निर्माण योजना ट्रस्ट, मथुरा से प्रकाशित तथा युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा से मुद्रित। संपादक- ईश्वर शरण पाण्डेय, सह संपादक- सूर्यमणि तिवारी, दीनदयाल अमृते

दूरभाष नंबर–(0565)2530115, 2530399, 2530128, 2530200 गो.– 09927086289, 09927086287
E-Mail: yugnirman@...